चन्दामामा
दिसम्बर १९७६
Rs 1·25

"आपने कहा था कि ये बड़ी आसानी से साफ किये जा सकते हैं!"
सोमानी-पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स आसानी से साफ किये जा सकते हैं तथा सम्पूर्ण स्वास्थ्य-सम्मत होते हैं। तरह तरह के डिजाइनो, फीके न पड़ने वाले रंगों—जगमगाते सफेद समेत में मिलते हैं। शानदार ऐसे कि देख कर जी खुश हो जाय। हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड द्वारा निर्मित सैनिटरीवेयर तथा सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड द्वारा बने सोमा मेटल फिटिंग्स का बड़ी खूबसूरती के साथ सोमानी पिल्किंगटन्स् वॉल टाइल्स से मेल बैठ जाता है।
खूबसूरत स्नानगृह का प्रतीक
सोमानी-पिल्किंगटन्स् लिमिटेड
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर की एक सहायक संस्था
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर एण्ड इण्डस्ट्रीज लिमिटेड
सबसे ज्यादा बिकने वाले और सबसे ज्यादा निर्यात किये जाने वाले भारतीय स्नानगृह उपकरणों के निर्माता
VITREOUS
सोमा प्लम्बिंग फिक्सचर्स लिमिटेड
हिन्दुस्तान सैनिटरीवेयर की सम्पूर्ण रूप से अपनी सहायक संस्था
२, रेड क्रास प्लेस, कलकत्ता-७००००१
naa. SPL-7523

चन्दामामा-कैमल रंग प्रतियोगिता

निःशुल्क प्रवेश

इनाम जीतिए

कैमल–पहला इनाम १५ रु.
कैमल–दूसरा इनाम १० रु.
कैमल–तीसरा इनाम ५ रु.
कैमल–आश्वासन इनामें ५
कैमल–सर्टिफिकेट १०
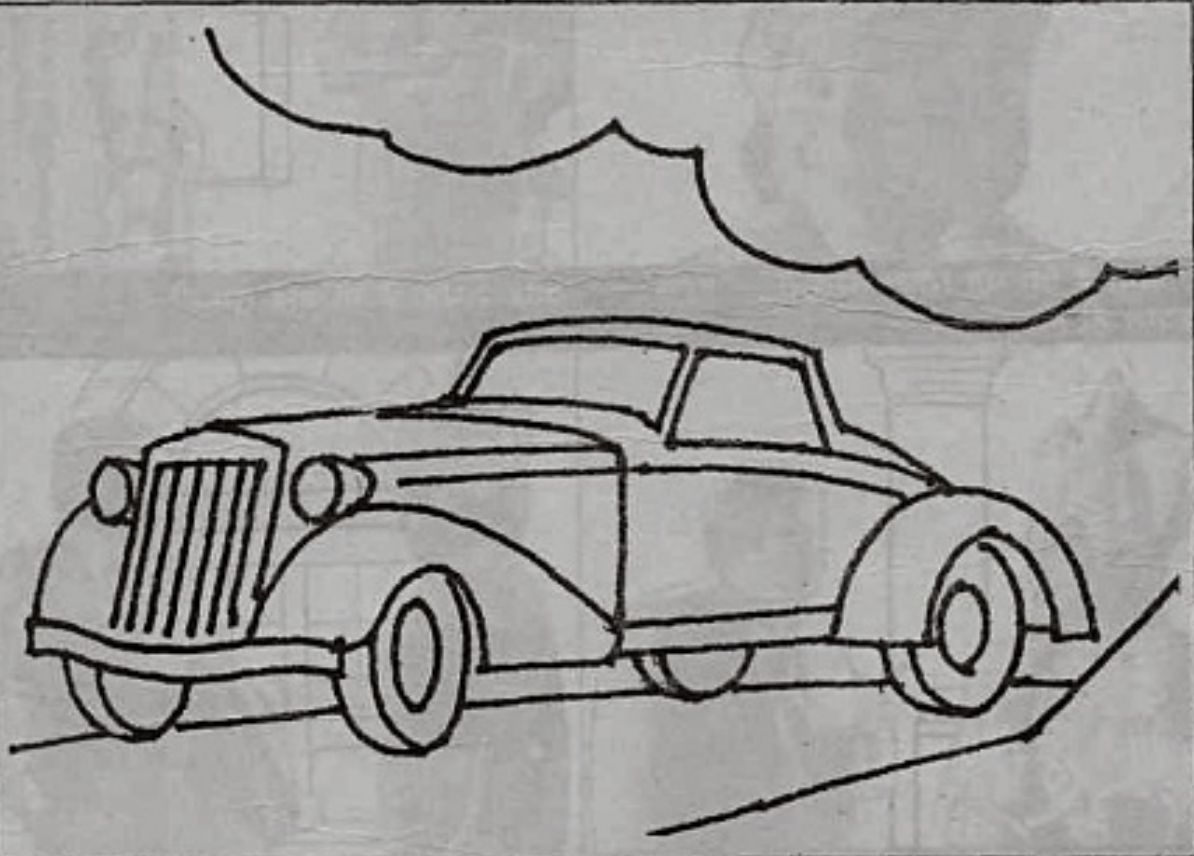
केवल १२ वर्ष तक के विद्यार्थी प्रतियोगितामें शामिल हो सकते हैं। उपर दिये गये चित्रमें अपने मनचाहें कैमल रंग भर दिजिए। अपने रंगीन प्रवेश-पत्र नीचे दिये गए पते पर भेजिए 'Chandamama 'Corinthian' Flat No. 5, 2nd Floor, 17 Arthur Bunder Road, Colaba, Bombay-400 005. परिणाम का निर्णय अन्तिम निर्णय होगा। और कोई भी पत्रव्यवहार, नहीं किया जाएगा।

Name.. Age..................

Address..

कृपया अपना नाम और पता अंग्रेज़ी में लिखिए।

CONTEST NO. 6

कृपया ध्यान रखिए कि पूरा चित्र पेंट किया जाये।

चित्र भेजने की अंतिम तारीख: 20-12-1976

Vision

Results of Chandamama-Camlin Colouring Contest No. 4 (Hindi)

1st Prize: B. Sita, Visakhapatnam. *2nd Prize:* Davinder Singh Sachdev, New Delhi. *3rd Prize:* Mayank Pandey, Dehra Dun. *4th Prize:* Anand Kumar Saraf, Calcutta. Sanjeev Kumar Malhotra, Moradabad. Kamlesh Kumar Sharma, Nathdwara. Rajendra Karmachandani, Meerut. Rajendra Kumar, Pali. *Merit Certificates:* Geeta Kumari, Gomia. Vikas Vats, Delhi. Meena Sohgal, Kanpur. Sudarshan Fomra, Calcutta. Anand Sharma, Kurukshetra. Atul Choudhry, Delhi. Sunil Ashwani, New Delhi. Sanjay Singh, Mysore. Hanif Mohammed Lalchi, Dohad. K. Abja Lahri, Lucknow.

कौन है वह? सचमुच कृष्ण ही है?
...या फिर कोई बहुरुपिया?

वह तुम्हारे पास क्यों आया है, आनन्द?

मुमकिन है कि यह सिर्फ़ तुम्हारा
ख़याल ही हो...

कोई सपना है या ख़ुद तुम ही हो?

दरअसल वह तुमसे
क्या चाहता है, आनन्द?

इन्सान के दिल में उठनेवाले विचारों के
चढ़ाव-उतार का चित्रण यानी

बी. नागी रेड्डी की फ़िल्म

यही है ज़िंदगी

ईस्टमनकलर,
फिल्मसेंटर द्वारा

मनुष्य के आंतरिक भावों का सुस्पष्ट निरूपण—
अहम् और परितोष के बीच संघर्ष की कहानी!

दिग्दर्शक: के. एस. सेथूमाधवन संवाद: इन्द्र राज आनन्द
गीत: आनन्द बक्षी संगीत: राजेश रोशन

विजया प्रॉडक्शन्स
की अनूठी फ़िल्म

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

चन्दामामा में प्रकाशनार्थ प्रति मास सैकड़ों की संख्या में कहानियाँ प्राप्त होती हैं। स्वीकृत रचनाओं की सूचना हम तत्काल भेज देते हैं, परंतु अस्वीकृत रचनाओं को पर्याप्त डाक टिकट संलग्न होने पर ही हम वापस करते हैं, अन्यथा वापस करना संभव नहीं है। इस संबंध में कृपया भविष्य में लेखक पत्र-व्यवहार न करें।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता की परिचयोक्तियाँ तथा कहानी-शीर्षक-प्रतियोगिता के शीर्षक अलग-अलग कार्ड पर ही भेजा करें। एक ही कार्ड पर दोनों का विवरण प्राप्त होने पर विचार नहीं किया जाएगा।

वर्ष : २९ विसंबर १९७६ अंक : ४

एक प्रति : १-२५ :: वार्षिक चन्दा : १५-००

अर्थेभ्यो हि विवृद्धेभ्य:,
संवृत्तेभ्य स्तत स्तत:
क्रिया स्सर्वा: प्रवर्तते
पर्वतेभ्य इवापगा: ॥ १ ॥

[नदियाँ जिस प्रकार पर्वतों में उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार धन से ही धार्मिक कार्यों की वृद्धि होती है ।]

अर्थेन हि वियुक्तस्य
पुरुष स्याल्पतेजस:
व्युच्छिद्यंते क्रिया स्सर्वा
ग्रीष्मे कुसरितो यथा ॥ २ ॥

[ग्रीष्मकाल में जैसे छोटी नदियाँ सूख जाती हैं, वैसे ही निर्धन व्यक्ति का तेज घटकर उसके प्रयत्न विफल हो जाते हैं ।]

सोय मर्थम् परित्यज्य
सुखकाम स्सुखैधित:
पाप मारभते कर्तुम्
ततो दोष: प्रवर्तते ॥ ३ ॥

[धन को खोनेवाला व्यक्ति सुखों का आदी होने के कारण पाप करने लगता है और अधर्म का भागी बनता है ।]

मित्र-संप्राप्ति

[४१]

हिरण्यक (चूहे) ने मंथरक को दैवाधीनम की कहानी सुनाकर आगे यों कहा :

बृहस्पति ने चूडाकर्ण से कहा—"हे मित्र, जब इसकी संपत्ति खो गई, तभी इसकी शक्ति भी जाती रही, इसलिए तुम निश्चित होकर सो जाओ।"

यह बात सुनने पर मेरा दिल बैठ गया। क्योंकि यह बात सही है, घर-संपत्ति के खोने पर कोई भी दुर्बल बन जाता है। मेरी यह आशा जाती रही कि मुझे पहले की भांति उस घर में अच्छा आहार प्राप्त होगा। मेरे अनुचर असंतुष्ट हो सोचने लग गये "यह तो हमारे लिए आहार का संपादन कर दे न सकेगा, बल्कि यह अपना आहार भी प्राप्त न कर सकेगा; ऐसी हालत में इसके आश्रय में रहने से क्या फ़ायदा?"

इसके बाद मैंने उस प्रदेश को छोड़ दूर देश में जाने का निर्णय कर लिया। क्योंकि वहाँ पर मेरा न आदर होगा, न प्रतिष्ठा ही होगी, इसलिए मैं अपने पुराने निवास को छोड़ एक जंगल में पहुँचा। वहाँ पर एक जाल में फंसा हुआ चित्रग्रीव मुझे दिखाई दिया, तुमने पहले ही सुना है कि मैंने उसे जाल से मुक्त किया है। इसके बाद लघुपतनक ने मेरे साथ मैत्री की और मुझे यहाँ पर निमंत्रित किया। इसलिए मैं उसके साथ तुम्हें देखने के लिए यहाँ पर आ पहुँचा।

मंथरक ने यह कहानी सुनकर सांत्वना दी—"तुम चिंता न करो। सोमिलक नामक जुलाहे ने अपने प्रारब्ध का सामना करके आखिर उस पर विजय प्राप्त की, तुम भी इसी प्रकार विजयी बन जाओगे।"

अंतिम पृष्ठ का चित्र

"वह कैसी कहानी है?" लघुपतनक ने पूछा। मंथरक ने जुलाहे की कहानी सुनाई।

जुलाहे की कहानी

सोमिलक एक कुशल जुलाहा था। वह विभिन्न रंगों के उत्तम वस्त्र बुन सकता था। उसके द्वारा बुने हुए वस्त्र राजाओं के द्वारा धारण करने योग्य होते थे। तरह-तरह के वस्त्र बुनने की कुशलता रखते हुए भी वह अपने खाने व कपड़े के खर्च से बढ़कर ज्यादा कमा न पाया। साधारण जुलाहे जो मोटे कपड़े बुनते थे, वे भी अधिक धन कमाते और सुख की चैन ले रहे थे। इसे देख उसने एक दिन अपनी पत्नी से कहा–"प्रिये, मोटे कपड़े बुननेवाले भी काफ़ी धन कमाकर सुख भोग रहे हैं, मैं बुनाई में कुशलता प्राप्त कर भी, अत्यंत मेहनत करने के बाद अपर्याप्त कमाई से कष्ट भोग रहा हूँ। मेरे साथ इस गाँव में ऐसा अन्याय हो रहा है। इसलिए मैं इस गाँव को छोड़ कहीं और जाना चहता हूँ।"

इसपर उसकी पत्नी ने समझाया–"हे प्रियतम! तुम्हारा यह सोचना भ्रम है कि तुम्हें यहाँ पर जो ऐश्वर्य प्राप्त नहीं हो रहा है, वह अन्यत्र प्राप्त होगा। यहीं रहकर जो कुछ प्राप्त होगा, उसी को अपना प्रारब्ध मानकर तृप्त हो जाओ।"

"प्रिये! तुम्हारा कहना सही नहीं है। प्रारब्ध भी हमारे कार्यों के विपरीत कुछ नहीं कर सकता। जैसे एक हाथ से ताली नहीं बजती, वैसे ही बिना प्रयत्नवाला कार्य सफल नहीं हो सकता। खाने की क़िस्मत रखते हुए भी हाथ यदि काम न देता तो खाना मुँह में नहीं जा सकता। लक्ष्मी भी श्रम करनेवाले पुरुष पर अपनी कृपा दृष्टि रखती है। हर बात में क़िस्मत का सहारा लेनेवाले कायर होते हैं। इसलिए हमें प्रारब्ध की बात भूलकर यथाशक्ति प्रयत्न करना चाहिए। तुम अपनी शक्ति भर प्रयत्न करो, तब भी यदि उसका कोई फल नहीं मिलता तो लोग तुम्हारी आलोचना या निंदा नहीं करेंगे। क्योंकि उसमें

तुम्हारे प्रयत्न का अभाव नहीं होता। हमारे सभी कार्य प्रयत्नों के द्वारा ही सफल होते हैं, लेकिन केवल कल्पना के द्वारा नहीं। जैसे सोनेवाले सिंह के मुँह में अन्य जानवर प्रवेश नहीं करते, वैसे ही प्रयत्न के बिना कोई इच्छा पूरी नहीं होती। इसलिए मैं गाँव छोड़कर कहीं चला जाऊँगा।"

इसके बाद वह जुलाहा वर्द्धमानपुर की ओर चल पड़ा। उसने तीन वर्ष तक वहाँ पर बड़ी मेहनत की। तीन सौ सोने के सिक्के कमाकर अपने गाँव की ओर चल पड़ा। रास्ते में उसे एक जंगल को पार करना पड़ा। जंगल को पार करते समय सूर्यास्त हो गया और चारों ओर अंधेरा फैल गया। उस रात को सोमिलक आगे बढ़ने से डर गया और एक बरगद पर चढ़कर एक डाल पर सो गया।

नींद में उसने एक सपना देखा। उसमें दो भयंकर व्यक्ति गुस्से में आकर वाद-विवाद कर रहे थे।

एक व्यक्ति दूसरे से कह रहा था-"हे कर्ता, मैंने सोमिलक को भर पेट खाने से बढ़कर कुछ अधिक देने से आपत्ति उठाई थी, तुमने इस कारण उसे ज्यादा नहीं दिया, लेकिन इस वक़्त तुमने तीन सौ सिक्के उसे क्यों दिये?"

दूसरे ने पहले से कहा-"हे कर्म, मनुष्यों के प्रयत्नों के अनुरूप फल प्रदान करना मेरा कर्तव्य है। यदि यह फल उसके भाग्य में लिखा न हो तो तुम्हीं ले लो।"

ये बातें सुनते ही सोमिलक नींद से जाग उठा, उसने अपनी थैली खोलकर देखा, वह खाली थी। उसने सोचा-"मेरी मेहनत का फल अचानक कैसे गायब हो गया? मेरा सारा श्रम व्यर्थ हो गया है। मेरे हाथ में एक कौड़ी तक नहीं है, ऐसी हालत में मैं अपनी पत्नी और मित्रों को कैसे देख सकता हूँ?" यों सोचकर वह पुनः वर्द्धमानपुर लौट पड़ा। कड़ी मेहनत करके एक साल के भीतर पाँच सौ सोने के सिक्के कमाये।

१७९. विश्व की सबसे बड़ी दूरबीन

उत्तर कावसेस के प्रांत में नये रूप से स्थापित इस "रिफ्लेक्टिंग" दूरबीन का अर्द्ध व्यास ६ मीटर या २३६ इंच है। (पोलोमार दूरबीन का अर्द्ध व्यास २०० इंच है) कुल दूरबीन का वजन ८५० टन है। यह एक हजार करोड़ प्रकाश वर्षों को देख सकती है। इस दूरबीन ने इसी वर्ष कार्य चालू किया है।
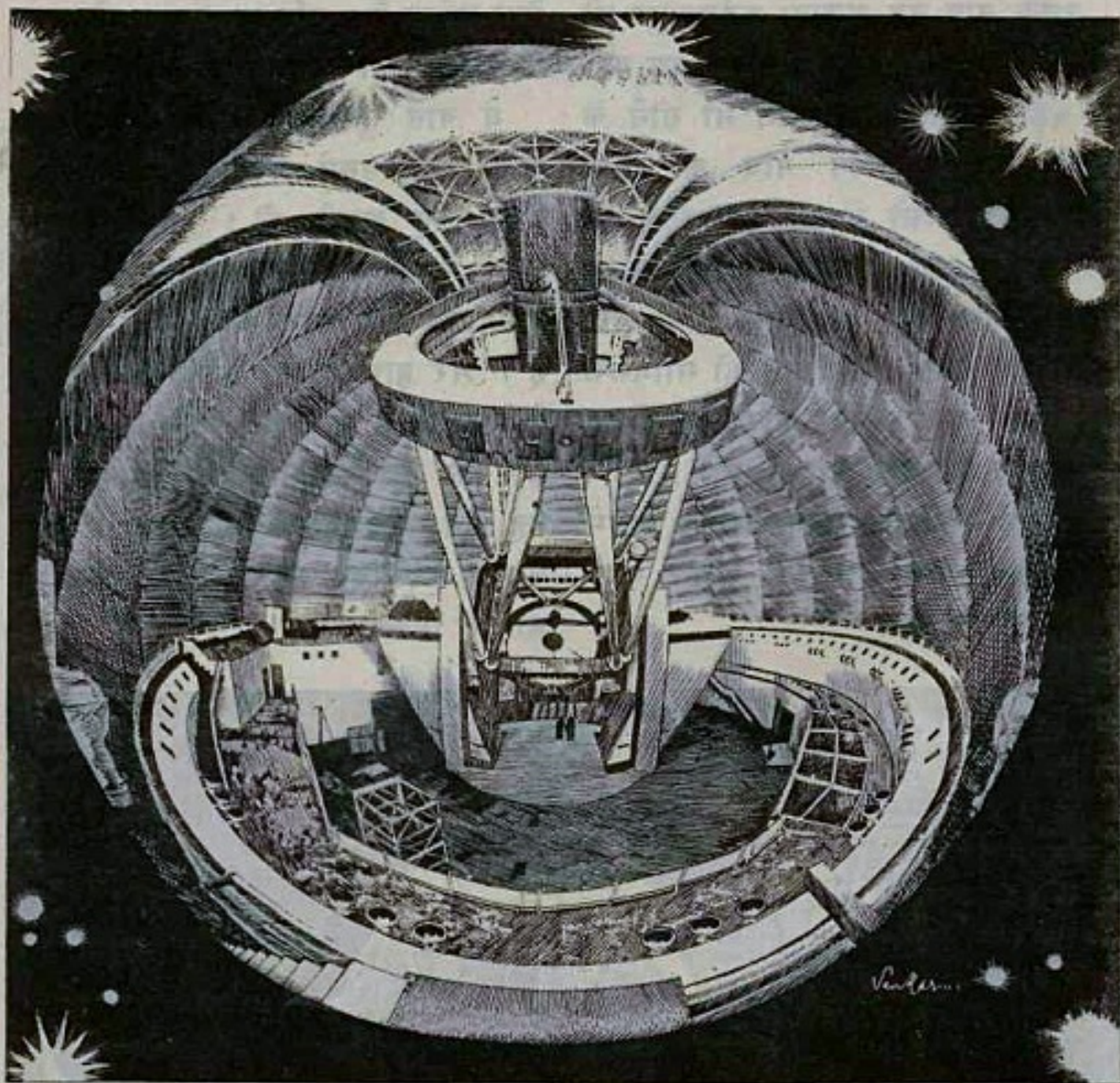
माया सरोवर

[११]

[जयशील के मन में यह विश्वास जम गया कि राजा कनकाक्ष की पुत्री एवं पुत्र का अपहरण करनेवाला व्यक्ति मकर केतु है। उसने सोचा कि मकर केतु का इलाज कराकर तब उसे राजा के पास ले जाय! मगर रास्ते में कुछ बहेलियों ने उन्हें रोका। उस वक्त दस घुड़सवारों ने आकर सब को घेर लिया। बाद–]

जयशील ने भांप लिया कि उन्हें घेरनेवाले घुड़सवार राजा के सैनिक हैं। तत्काल उसने अपनी तलवार म्यान में रखते हुए कहा–"लो, देखो! उस विचित्र हाथी पर मगर-मच्छ की आकृति में स्थित व्यक्ति ही राजा कनकाक्ष का बन्दी है। देखो, वह भागने न जाय!"

घुड़सवारी दल के नेता ने मकर केतु तथा उसके वाहन जलग्रह की ओर ध्यान से देखा, पल भर के लिए स्तम्भित हो बोला–"वह कौन है? कोई राक्षस है या दुष्ट पिशाच?"

"महाशय! वह इन दोनों में से कोई नहीं है! मगर यह भी कहना मुश्किल है कि वह अमुक जाति का है!" जयशील ने जवाब दिया।

इस बीच सिद्ध साधक ने बहेलिया गणाचारी को जयशील की पकड़ में से

तलवार हाथ में लिये हुए जयशील तथा इन सबसे भयंकर लगनेवाला विचित्र हाथी पर बैठा मकर केतु उपस्थित हैं।

बहेलियों में से एक ने सोचा कि उनका वहाँ से प्राणों के साथ भाग जाना सरल कार्य नहीं है, क्योंकि उन्हें घेरनेवाले लोग अत्यंत शक्तिशाली हैं, उसने कहा–"अबे, तुम सब सोच-समझकर बतला दो, हमें अब क्या करना होगा? इस मांत्रिक के कहे अनुसार हम क्या अपने इस गणाचारी पर बाणों का प्रयोग करें? यदि हम ऐसा नहीं करेंगे तो हम सबकी मौत निश्चित है।"

बचाया, थोड़ी दूर ले जाकर धनुष और बाणों का निशाना बनानेवाले बहेलियों से बोला–"अबे भोले बच्चे! यह काली माता का सच्चा भक्त नहीं है। कपटी है, मैं महा काल का भक्त हूँ। इसलिए इस को देखते ही यह बात समझ गया। तुम लोग इसके कलेजे को बाणों से छेद डालो। मैं एक, दो, तीन नंबर गिनूंगा, तीन की संख्या के सुनते ही तुम लोगों को बाण चलाना होगा।"

सिद्ध साधक की बातें सुन सभी बहेलिये भय कंपित हो उठे। वहाँ पर राजा के दस सैनिक, काले वस्त्र पहने, लंबी दाढ़ी के साथ मांत्रिक जैसे लगनेवाला सिद्ध साधक,

"इतने सारे लोगों के प्राण बचाने के वास्ते हमारी जाति के एक आदमी का मरना उचित ही है। क्यों गणाचारीजी, क्या तुम पर बाण चलावे?" एक बहेलिये ने पूछा। ये बातें सुनने पर बहेलिया गणाचारी मौत के भय से कांप उठा और जयशील से बोला–"महानुभाव! हमारे इन कमबख्त भोले बहेलियों से मेरी जान बचाइये! तीरों के घाव तलवार के प्रहारों से कहीं कष्टदायक होते हैं!"

"अबे, मरने के लिए तीर और तलवार के प्रहार में अंतर क्या पड़ता है? तुम बकवास बंद करके चुपचाप खड़े हो जाओ।" सिद्ध साधक ने धमकी दी।

बहेलिये तीर का निशाना लगानेवाले थे, तभी जयशील ने उन्हें रोका और सिद्ध साधक से कहा–"सिद्ध साधक! यह तुम क्या करने जा रहे हो? तुम इन्हें मृत्यु दण्ड देने के लिए राजा थोड़े ही हो?"

जयशील का क्रोध देख सिद्ध साधक का चेहरा पीला पड़ गया और बोला–"जयशील, क्या तुम मेरी बातों को सच मान बैठे हो? इस दुष्ट गणाचारी को सबक़ सिखाने के लिए मैं यह नाटक रच रहा हूँ! राजा के घुड़सवार यदि समय पर पहुँच न जाते, तो अब तक ये बहेलिये या हम लोग मर गये होते न?"

यह सारा नाटक घुड़सवारों का नेता विस्मयपूर्वक देख रहा था, उसने कहा–"महाशय, क्या आप ही जयशील हैं? हमारे मंत्री महोदय निकट के गाँव में डेरा डाले हुए हैं। राजधानी में यह समाचार मिल गया था कि आप ने राजा के पुत्र व पुत्री का अपहरण करनेवालों को बन्दी बनाया है। हम लोग आप ही की खोज में इस जंगल में आ पहुँचे हैं।"

"अश्व दल के नेता! आप ने बड़ा ही अच्छा काम किया! मैंने–याने सिद्ध साधक–तथा इस जयशील ने मिलकर युवराजा तथा युवरानी का अपहरण करनेवाले को बन्दी बनाया है। वही यह व्यक्ति है! यह विचित्र लग रहा है न?" सिद्ध साधक ने कहा।

"विचित्र क्या, भयंकर लग रहा है। इसने अपनी बगल और कंधे पर तलवार तथा बाण को आभूषणों की भांति धारण कर रखा है। मुझे इसे देख आश्चर्य हो रहा है।" अश्वदल के नेता ने कहा।

"वे आभूषण नहीं, उसकी जान लेनेवाले काल हैं। मैं और चरकाचारीजी हम दोनों इसे अपने गाँव में ले जाकर इसका इलाज करना चाहते हैं। हमें यह जानकर बड़ी खुशी हो रही है कि मंत्री साहब हमारे ही गाँव में डेरा डाले हुए

हैं ।" हाथी की ओट में से बाहर निकलते हुए वीरनारायण ने कहा ।

जयशील को लगा कि अब वहाँ पर विलंब करना उचित नहीं है । जल्दी गाँव में पहुँचकर मंत्री धर्ममित्र को वास्तविक समाचार देना उचित होगा । मंत्री महोदय से निवेदन करना है कि युवराज तथा युवरानी का इतनी जल्दी प्राप्त होना मुमकिन नहीं है । पहले यह देखना होगा कि मकर केतु मरे नहीं बल्कि जीवित रहे, उसके द्वारा ही युवराजा तथा युवरानी का पता लगाना संभव है ।...

जयशील ने यों सोचकर मकर केतु से कहा–"अब तुम्हारे प्राणों के लिए कोई डर नहीं है । राजा कनकाक्ष ने स्वयं तुम्हारे प्राणों की रक्षा करने के लिए अपने मंत्री को भेजा है । ज़रूरत पड़ने पर तुम्हारे इलाज के लिए वे राजधानी से राजवैद्यों को भी भिजवा सकते हैं ।"

मकर केतु एक बार जोर से कराह उठा और बोला–"मेरी बगल में धंसी तलवार और भुजा में चुभा हुआ बाण मुझे बहुत सता रहे हैं । लगता है कि 'यह बाण छोड़नेवाले दुष्ट बहेलिये ने जलग्रह की सूंड पर ही दम तोड़ दिया होगा! क्या मैं जलग्रह के द्वारा उसे दूर फिकवा दूं?'

जयशील ने भीमदास के चेहरे की ओर ध्यान से देखा । उसे लगा कि शायद डर के मारे भीमदास की जान निकल गई हो! उसी वक़्त चरकाचारी ने भीमदास की नाड़ी की जांच की और कहा–"महानुभाव! यह अभी तक जिंदा है । इसकी नाड़ी धीमी गति से चल रही है ।"

"तुम्हारी बात सही है, पर इसमें चेतना कैसे पैदा करे? इसको अन्य बहेलियों के हाथ सौंप देना शायद उचित होगा! हम लोग इसको भी गाँव तक कहाँ ढोकर ले जा सकते हैं?" जयशील ने कहा ।

जयशील की बात पूरी होने जा रही थी, तभी सिद्ध साधक भीमदास के कान में जोर से चिल्ला उठा–"अबे भीमदास!

तुम नींद से जाग जाओ! तुमने जिस जंगली मुर्गे को मारा, उसे मंत्री साहब ने तुम्हें मकर केतु के हाथ से वापस दिलाया है। उसे लेकर तुम्हारा गणाचारी भाग रहा है।"

फिर क्या था, दूसरे ही क्षण बहेलिया भीमदास तेजी से उछल पड़ा, जलग्रह की सूंड से नीचे गिर पड़ा, निकट के एक घुड़सवार के हाथ से भाला खींचकर चारों ओर नज़र दौड़ाते चिल्ला उठा–"भूत-पिशाचोंवाला वह गणाचारी कहाँ? मेरा मुर्गा कहाँ पर है?"

सिद्ध साधक ने भीमदास के कंधे पर थपकी देकर सावधान किया–"अबे भीमदास, क्या तुम्हें ठीक से दिखाई नहीं देता? देखो, सामने कौन खड़े हुए हैं? जरा सावधानी से तो देख लो, उनके आगे खड़ा हुआ व्यक्ति क्या तुम्हारा गणाचारी ही है!"

साधक के मुंह से ये शब्द सुनकर भीमदास ने दूर पर खड़े अपनी जाति के लोगों को देखा। उनके आगे डर के मारे काँपनेवाले भूतगणों के नेता गणाचारी पर उसकी नज़र पड़ी। उसी वक़्त उसे सिद्ध साधक के द्वारा याद दिलाई गई मुर्गे की बात ताजा हो उठी।

"मकर केतु ने जो मुर्गा दिया, बता दो, वह कहाँ पर है? गणाचारी, तुमने मेरे मुर्गे को कहाँ पर छिपा रखा है? उसे नहीं दिया तो...भूख! भूख!" चिल्लाते

भीमदास भाला उठाये गणाचारी की ओर दौड़ पड़ा ।

गणाचारी चीख उठा और बोला– "भीमदास के अन्दर कुक्कुट पिशाच प्रवेश कर गया है । बिल्ली का मंत्र फूंकने पर ही वह उसे छोड़ सकता है । पहले हमें उसके भाले के प्रहार से बचना है, भागो, दौड़ो!" यों कहते वह लगा दौड़ने । उसके पीछे अन्य बहेलिये भी भागने लगे । भीमदास रौद्र रूप धारण कर चिल्लाते भाला उठाये उनका पीछा करने लगा ।

"जयशील, हम बच गये । इन बहेलियों का पिंड छूट गया है ।" यों कहते सिद्ध साधक ठठाकर हँस पड़ा ।

जयशील ने भागनेवाले बहेलियों तथा उनका पीछा करनेवाले भीमदास को देख कहा–"सिद्ध साधक! इस सारी झंझट का मूल कारण तुम्हीं हो! जंगल में पशु-पक्षियों को मारकर पेट भरनेवाले बहेलिये राम को तुमने 'भीमदास' की उपाधि देकर उसके भीतर अहंकार पैदा किया ।"

"जयशील! तुम्हारे इस कथन में सचाई जरूर है, पर अब उस धूर्त गणाचारी का सच्चा प्रतिस्पर्धी यही एक है । अब ये लोग हमारे कार्य में विघ्न नहीं डालेंगे ।" सिद्ध साधक ने कहा ।

"महाशय! क्या अब हम चल सकते हैं?" घुड़सवारों के नेता ने पूछा ।

"हाँ, हाँ, अब हम रवाना हो सकते हैं ।" जयशील ने कहा, फिर कुछ क्षण रुककर चरकाचारी तथा वीरनारायण को अपने निकट बुलाया और उन्हें आदेश दिया–"तुम लोग आगे आगे चलते हमें रास्ता दिखला दो । सुनते हैं, मंत्री महोदय ने तुम्हारे ही गाँव में डेरा डाला है ।"

"मंत्री साहब गाँव के बाहर पहाड़ी तालाब के निकट डेरा डलवाकर उसमें रह रहे हैं, हमसे बताया है कि यदि आप जंगल में दिखाई दें तो आप को सीधे वहीं पर बुला ले जाय!" अश्वदल के नेता ने कहा ।

जयशील ने चरकाचारी और वीर नारायण को ठोका–"तुम लोगों ने सुना है न?"

"हाँ, हाँ, महाराज! खूब सुना है। इस मकर केतु का इलाज़ मंत्री साहब के समक्ष करके हम उनकी शाबाशी प्राप्त कर लेंगे।" चरकाचारी ने उत्तर दिया।

"चरकाचारीजी, तुम ठीक कहते हो! मकर केतु की शस्त्र-चिकित्सा करने पर हमें राजा कनकाक्ष के दरबार में वैद्याचार्य के पद मिल सकते हैं। तुम्हारी क्या राय है?" वीरनारायण ने विस्मय एवं संभ्रम में आकर कहा।

"आचार्य पद की बात तो मैं नहीं कह सकता, मगर शस्त्र-चिकित्सा करके तुम लोग मकर केतु के प्राण बचा न पाये, तो मंत्री साहब ही तालाब के किनारे तुम दोनों के सर कटवा डालेंगे। सावधान रहो।" जयशील ने चेतावनी दी।

"अगर यह काम मंत्री महोदय मुझे सौंप दे तो मंत्रोच्छारण करते में इन दोनों की बलि महाकाल को दूंगा! इसके द्वारा न केवल हमारा हित होगा, बल्कि जगत का भी कल्याण होगा!" सिद्ध साधक ने जोश में आकर कहा।

"वाद-विवाद समाप्त कर अब चले चलो।" जहशील ने ठोका।

आध घड़ी के अंदर सब लोग पहाड़ी तालाब के किनारे पर स्थित मंत्री के डेरे के पास पहुँचे। मंत्री धर्ममित्र ने

सबकी ओर एक बार दृष्टि दौड़ाई, तब सादर जयशील से कहा—"तुमने राजा के पुत्र व पुत्री का अपहरण करनेवाले को बन्दी बनाया। इस उपलक्ष्य में मैं तुम्हारा अभिनंदन करता हूँ। उस दुष्ट ने युवराज और युवरानी को कहाँ पर छिपा रखा है?"

जयशील ने मंत्री को सारी बातें सुनाईं, तब कहा—"महाशय, मकर केतु की शस्त्र-चिकित्सा करके पहले तलवार तथा बाण उसके शरीर से निकाला जाय और उसके घावों के भरने के बाद उससे दरियाफ़्त किया जाय तो ज्यादा उत्तम होगा।"

"अच्छी बात, है ऐसा ही करेंगे। यदि इस वक़्त इसने सच्ची बात न बताई तो हाथी के पैरों के नीचे कुचलवाकर इसकी जान ले लेंगे।" मंत्री धर्ममित्र ने मकर केतु की ओर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाकर कहा।

यह सारा वार्तालाप मकर केतु बड़ी सावधानी के साथ सुन रहा था, उसने कहा—"महाशय जयशील! जलग्रह के पानी पिये कई दिन हो गये हैं। इस विशाल तालाब में उतारकर मैं इसे जल पिलाऊँगा।"

"अच्छी बात है, ऐसा ही करो। मगर मैं और सिद्ध साधक हम दोनों तुम्हारे साथ जलग्रह पर ही बैठे रहेंगे, वरना तुम हमें दगा दे सकते हो।" यों कहकर जयशील जलग्रह पर जा खड़ा हुआ। सिद्ध साधक भी उस पर सवार हो गया।

मकर केतु ने जलग्रह को हांककर तालाब में उतारा, उसे गहरे पानी तक ले जाकर बोला—"जयशील! मेरी मौत निश्चित मालूम होता है। चाहे मेरे घावों के भरने के बाद हो या पहले!" ये शब्द कहकर वह पल भर मौन रहा, तब उच्च स्वर में चिल्ला उठा—"हे माया सरोवरेश्वर!" फिर जलग्रह को ललकार कर कहा—"हे जलग्रह! पानी में डुबकी लगाकर आगे बढ़ो।"

दूसरे ही क्षण जलग्रह जयशील तथा सिद्ध साधक के साथ पानी में डूब गया।

(और है)

सन्यासी का पक्षपात

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया।

पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन, में नहीं जानता कि आप किसके प्रति पक्षपात का भाव रखते इस प्रकार श्रम उठा रहे हैं। लेकिन अकसर यह देखा गया है कि सांसारिक कामनाओं को त्यागकर तपस्या करनेवाले मुनियों में भी पक्षपात का भाव होता है। इसके उदाहरण स्वरूप मैं आप को ज्ञानशेखर की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये।"

बेताल यों सुनाने लगा: सदियों पहले की बात है–धनवर्मा तथा धीरवर्मा नामक राजा अड़ोस-पड़ोस के राज्यों पर शासन करते थे। दोनों राज्यों के बीच में स्थित जंगल में ज्ञानशेखर नामक मुनि अपनी

बेताल कथाएँ
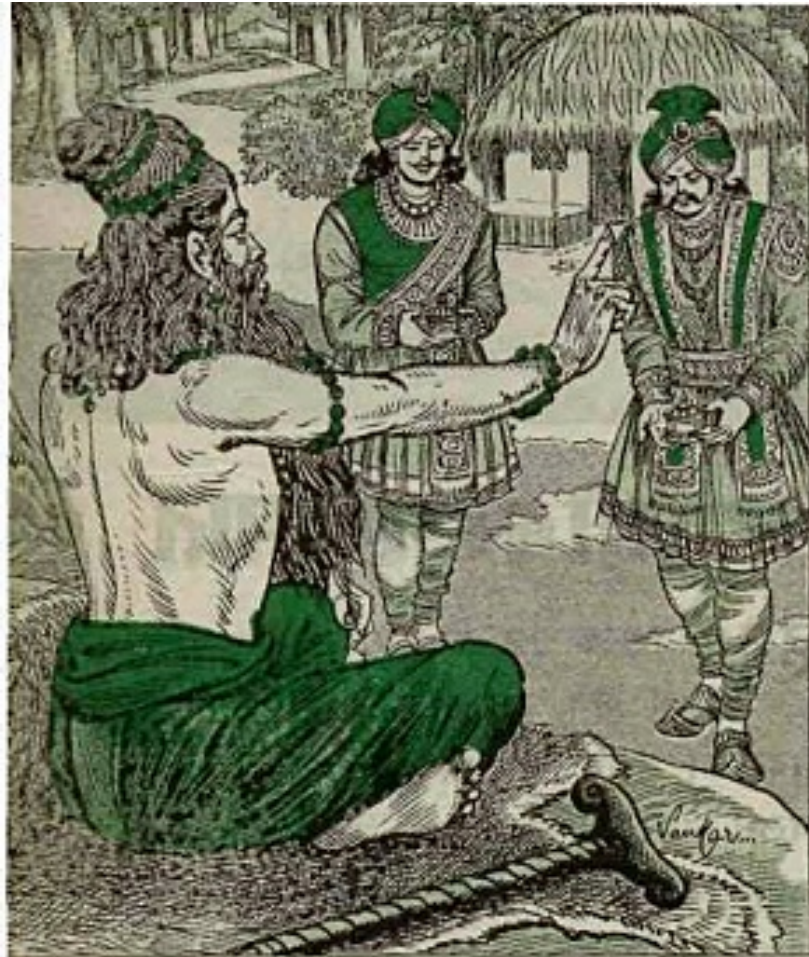
कुटी बनाकर तपस्या किया करते थे। दोनों राज्यों की प्रजा विपत्ति के समय मुनि के पास जाकर अपनी कठिनाइयाँ सुनाती और उनकी सलाहों के अनुसार अपनी समस्याओं को सुलझा लेती थी।

एक वर्ष समय पर पानी न बरसा। अकाल के लक्षण दिखाई देने लगे। अकाल से अपनी प्रजा को बचाने के लिए मुनि की सलाह लेने धनवर्मा तथा धीरवर्मा एक ही दिन ज्ञानशेखर की कुटी में पहुँचे।

ज्ञानशेखर ने दोनों राजाओं की बातें सावधानी से सुनीं और कहा—"बेटे, मैं तुम दोनों को दो दंत-पेटियाँ दूंगा। जब कभी तुम्हारे सामने कोई ऐसी समस्या उपस्थित हो जाय, जिसका तुम लोग हल न कर सके, तो इन पेटियों को खोलकर देख लो। तुम्हारी समस्याओं का समाधान मिल जाएगा। परंतु तुम लोगों को स्वयं अपने बुद्धिबल से इस बात का निर्णय कर लेना होगा कि पेटियों से जो सहायता प्राप्त होगी, उसका उपयोग कैसे किया जाय! पर याद रखो, हर छोटी-सी बात के लिए इन पेटियों का उपयोग नहीं करना चाहिए। यदि मुझे मालूम हो जाय कि तुम लोगों ने मेरी सलाहों के विरुद्ध इनका उपयोग किया है, उसी वक़्त मैं इन पेटियों को वापस ले लूंगा। मैं थोड़े समय के लिए समाधिस्थ होने जा रहा हूँ। मेरे पुनः आँखें खोलने तक तुम लोगों को मेरा ध्यान-भंग नहीं करना चाहिए।" यों समझाकर मुनि ने दोनों राजाओं को दो दंत-पेटियाँ दीं और वे आँखें मूंदकर समाधिस्त हो गये। राजा उन पेटियों को लेकर अपनी अपनी राजधानियों को लौट गये।

धनवर्मा ने अकाल को दूर करने के लिए अपने मंत्री तथा व्यापारियों को बुलाकर मंत्रणा की, आखिर कोई उपाय न पाकर ज्ञानशेखर द्वारा प्राप्त दंत-पेटी खोलकर देखा। उसमें से अपार संपत्ति निकल आई। उस धन से अन्य देशों से

अनाज मँगाकर राजा ने जनता में बांट दिया और अकाल की मौत से उन्हें बचाया। इस कारण जनता ने यह अनुभव तक न किया कि अकाल पड़ गया था।

मगर धीरवर्मा ने अकाल का सामना करने के लिए कुछ उपायों का सहारा लिया। उन्होंने सोचा कि यदि वे उपाय सफल न हुए तो दंत-पेटी की सहायता ली जाय। उन्होंने सर्व प्रथम अपने देश के अनाज को देश से बाहर जाने से प्रतिबंध लगाया, व्यापारियों के पास जो कुछ अनाज था, उसे अपने अधीन करके जनता में बंटवा दिया। जनता को कठिनाइयाँ अवश्य उठानी पड़ीं, परंतु देश अकाल की मृत्यु से बच रहा।

राजा धनवर्मा के मन में इस बात का अहंकार आ गया कि उन्होंने धीरवर्मा की अपेक्षा अपनी प्रजा का ज्यादा उपकार किया है, इसके बाद अपनी मंत्री तथा सलाहकारों को बुलाकर कहा–"में चाहता हूँ कि हमारे देश को और देशों की अपेक्षा सभी प्रकार से संपन्न करके जनता को ऐसी सुविधाएँ दूं जो आज तक कोई भी राजा न कर सका हो। इसके लिए हमें क्या करना होगा?" इस पर सबने यही सलाह दी कि फिर एक बार मुनि ज्ञानशेखर के द्वारा दी गई पेटी की सहायता ली जाय।

राजा धनवर्मा ने पेटी खोलकर देखा। उसमें एक चिट था जिस पर लिखा हुआ था–"प्रतीक्षा करके देख लो।"

इस घटना के थोड़े दिन बाद दूर देश से कोई ज्ञानी धनवर्मा के दर्शन करने आया और बोला–"महाराज! मेरे पास एक यंत्र है। उसकी मदद से भूगर्भ में स्थित धातुओं का पता लगाया जा सकता है। जहाँ मैं निर्देश दूं, वहाँ पर खोदने से आप को अनेक प्रकार की धातुएँ प्राप्त हो जायेंगी। इस प्रकार आप का देश संपन्न हो सकता है। मगर मेरी एक शर्त है–मेरी मदद से आप जो संपत्ति जमीन के गर्भ से बाहर निकालेंगे उसमें से आधी संपत्ति मेरी हो जाएगी।"

इस शर्त को राजा धनवर्मा ने मान लिया। ज्ञानी की मदद से अपार सोना, चांदी, तांबा, लोहा इत्यादि धातुओं को बाहर निकलवाया, उनके मूल्य में से आधा ज्ञानी को दिया। इसके बाद अपने देश को आर्थिक दृष्टि से संपन्न बनाया।

यह समाचार मालूम होने पर धीरवर्मा के मंत्रियों ने भी उन्हें सलाह दी कि दंत-पेटी की मदद से उनके देश को भी समृद्ध बनाया जाय, लेकिन धीरवर्मा ने उनकी सलाह को अनसुनी कर दी।

थोड़े दिन बाद उसी ज्ञानी ने धीरवर्मा की सेवा में पहुँचकर वही सलाह दी।

इस पर धीरवर्मा ने ज्ञानी को उत्तर दिया—"यदि आप अपना यंत्र हमें बेचने को तैयार हों तो मैं उसे ख़रीद लूंगा। लेकिन आप की मदद से हमारे देश की भूगर्भ स्थित संपत्ति को बाहर निकालकर उसमें से आधा हिस्सा आप को देने के लिए मैं कदापि तैयार नहीं हूँ।"

"इस दुनिया में मैं ही अकेला यह यंत्र तैयार कर सकता हूँ। इसलिए इसे किसी को बेचने का सवाल ही नहीं उठता। आप ने मेरी शर्तों को अस्वीकार किया। इसलिए अन्य उपायों के द्वारा भूगर्भ स्थित संपत्ति को बाहर निकालने में आप को पचास वर्ष लग जायेंगे। आप धनवर्मा से पचास साल पीछे रह जायेंगे।" यों चेतावनी दे ज्ञानी चला गया।

कई महीने बाद ज्ञानशेखर समाधि में से बाहर आये, दोनों देशों की हालत जानने के लिए चल पड़े। धीरवर्मा ने ज्ञानशेखर को बताया कि अकाल को दूर करने के लिए उन्होंने क्या क्या किया है, यह भी कहा कि उन्होंने एक बार भी दंत-पेटी का उपयोग नहीं किया है।

धनवर्मा ने ज्ञानशेखर को प्रत्यक्ष रूप में दिखाया कि उनके द्वारा प्राप्त पेटी की मदद से उन्होंने अपने देश तथा जनता की कैसी उन्नति की। इस पर ज्ञानशेखर ने

धीरवर्मा को दी गई पेटी उन्हीं के पास रहने दी, परंतु धनवर्मा के यहाँ से उस पेटी को वापस ले लिया ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन! ज्ञानशेखर के इस व्यवहार का कारण क्या है? क्या धीरवर्मा के प्रति उनका पक्षपात है? या यह सोचकर धनवर्मा से पेटी वापस ली कि उसके द्वारा धनवर्मा को भविष्य में किसी प्रकार का उपयोग नहीं है? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा ।"

इस पर विक्रमार्क ने यों कहा– "ज्ञानशेखर का धनवर्मा के यहाँ से पेटी को वापस लेने का मुख्य कारण यह है कि धनवर्मा ने ज्ञानशेखर के द्वारा बताये गये दोनों नियमों का उल्लंघन किया है। उसने दोनों दफ़े अपने सामने किसी प्रकार की समस्या के उत्पन्न होने के पूर्व ही स्वावलंबन द्वारा अकाल पड़ने के पूर्व उसका सामना करने के लिए आवश्यक उपयों के बारे में सोचे बिना पेटी खोल दी, धन प्राप्त करके आवश्यकता से अधिक अनाज खरीदकर उसका दुरुपयोग किया है। इस कारण जनता मितव्ययता का सबक़ सीख न पाई। दूसरी बार अपने देश की भूगर्भ स्थित संपत्ति में से आधा ज्ञानी को देकर भावी पीढ़ियों के प्रति अन्याय किया है। धनवर्मा ने जनता का उपकार करने की बात सोचते उनके प्रति अज्ञात रूप से हानि ही की है। मगर धीरवर्मा ने ऐसा नहीं किया। वह जिस समस्या को स्वयं सुलझा सकता था, उसकी बाबत वे पेटी पर निर्भर न रहें। इस कारण हम कह सकते हैं कि धीरवर्मा ने पेटी का दुरुपयोग नहीं किया है। इसीलिए ज्ञानशेखर ने धीरवर्मा के पास उक्त पेटी को रहने दिया और धनवर्मा के हाथ से पेटी वापस ले ली ।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा ।

(कल्पित)

बुद्धिमान नौकर

एक धनी की पुत्री का विवाह निश्चय हो गया। धनी ने शहर के एक जौहरी के हाथ पाँच हज़ार रुपये देकर गहने बनवाने का प्रबंध कर रखा था। अब विवाह का समय निकट आ गया था। शहर से गहने मँगवाने थे। लेकिन इधर थोड़े दिनों से शहर तथा गाँव के बीच स्थित छोटे से जंगल में चोरों का बोलबाला हो गया था।

धनी यह सोचकर चिंता में डूब गया कि शहर से गहने कैसे मँगवा लिये जाय? उसी समय उसके चन्द्रशेखर नामक एक नौकर ने सुझाया कि वह शहर जाकर गहने ले आएगा। चन्द्रशेखर ईमानदार था, इसलिए धनी ने उसकी बात मान ली।

चन्द्रशेखर जब जंगल से होकर जा रहा था तब चार चोरों ने उसकी तलाशी ली। उसने चोरों से बताया कि इस वक्त उसके हाथ कुछ नहीं है, लेकिन शहर से लौटते समय दस हज़ार मूल्य के गहने होंगे। इस पर चोरों ने उसे जाने दिया।

दूसरे दिन जब चन्द्रशेखर शहर से लौट रहा था, तब उन्हीं चोरों ने उसे रोककर पूछा—"अबे गहने कहाँ? देते जाओ तो।"

चन्द्रशेखर ने जवाब दिया—"भाइयो, जौहरी ने यह कहकर मुझे गहने नहीं दिये कि रास्ते में चोर लूट लेंगे। अगर तुम अपनी मदद के लिए चार लोगों को बुला लाओगे तो गहने दे दूँगा। इसलिए तुम लोग मेरी सहायता के लिए मेरे साथ चलो।"

चोर बहुत खुश हुए और चन्द्रशेखर के साथ शहर चले गये। सिपाहियों ने चोरों को बन्दी बनाकर कारागार में डाल दिया।

सेनापति की क़िस्मत

"महाराजा की जय हो! हमारे सेनापति विक्रमजित ने पन्ना के राजा को हराया, उन्हें बन्दी बनाकर नगर में प्रवेश कर रहे हैं।" गुप्तचरों ने महाराजा जयंत से निवेदन किया।

जयंत ने परमानंदित हो उसी वक़्त आदेश दिया—"तुम लोग सर्वत्र विजय तोरण बांध दो, उत्सव मनाओ।"

"महाराज! लेकिन एक बात है! हम आप से कैसे निवेदन करें? समझ में नहीं आ रहा है।" दूतों ने कहा।

"डरो मत, बताओ!" राजा ने अभयदान दिया।

"युद्ध में सेनापति के बायें हाथ की मध्यम उंगली कट गई है।" दूतों ने बताया।

महाराजा जयंत माथे पर हाथ रखकर सिंहासन पर लुढ़क पड़े। राजा को यह समाचार वज्रपात जैसे लगा। महान वीर तथा विजयी विक्रमजित आइंदा सेनापति के पद पर नहीं रह सकता। उस देश का यह नियम था कि कोई भी अंगहीन व्यक्ति सेनापति का पद सुशोभित नहीं कर सकता। राजा जयंत ने सोचा कि यह कमबख़्त नियम उसे दुखी बनाने के लिए बना हुआ है। क्योंकि विक्रमजित देश की सुरक्षा का प्रहरी था। उसकी वजह से ही जयंत ने निश्चिंतता पूर्वक आज तक शासन-कार्य संभाला था। यदि विक्रम सेनापति के पद पर न रह सकेगा तो वह जयंत के लिए तीव्र आघात के समान था। इस कारण जयंत विजय की खुशी से भी वंचित रह गये। उल्टे उनकी खुशी दुख में बदल गई।

विक्रम, जयंत तथा प्रधान मंत्री का पुत्र—ये तीनों बचपन के अभिन्न मित्र थे।
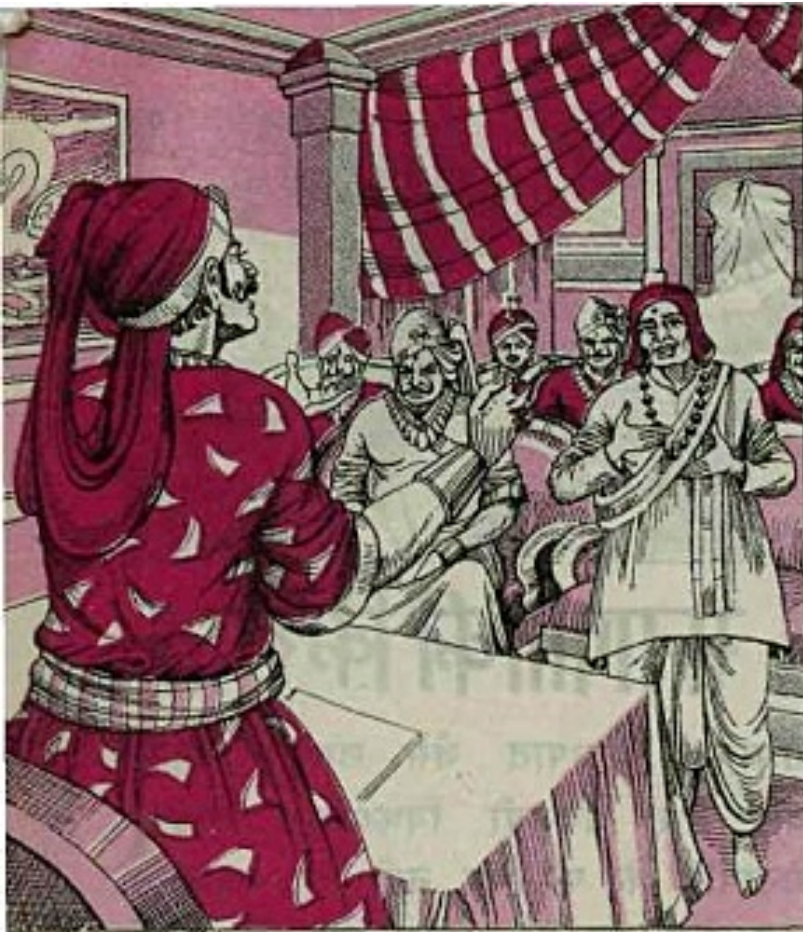
अपने पिता की मृत्यु के बाद जैसे जयत उस देश का राजा बन बैठे, वैसे ही विक्रम भी अपने पिता के स्थान पर सेनापति बन गया था।

जयंत इस चिंता के कारण आखिर मानसिक व्याधि का शिकार बन गये। शासन के सारे कार्य प्रधान मंत्री के कंधों पर छोड़ वे अंतःपुर में चिंतामग्न हो गये। विक्रम के न रहने से शत्रु अपने देश पर आक्रमण कर बैठे तो देश की क्या हालत होगी? इसी चिंता में राजा ने खाट पकड़ ली।

विक्रमजित ने राजा के दर्शन करके समझाया–"महाराज, आप चिंता क्यों करते हैं? मैं ज़िंदगी भर आप के साथ रहूँगा।"

"विक्रम, फ़ायदा ही क्या रहा? तुम सेनापति का पद संभाल नहीं सकते। नियम और रीति-रिवाजों ने मेरे हाथ-पैर बांध रखे हैं, ऐसी हालत में मेरे राजा बने रहने का अर्थ ही क्या है?" जयंत ने अपनी व्यथा प्रकट की।

इसके बाद राजा चिंता के मारे बेहोश हो गये। वैद्यों ने आकर उनका इलाज किया और उन्हें होश में लाये।

इस स्थिति को देख प्रधान मंत्री ने अन्य मंत्रियों से कहा–"विक्रमजित को सेनापति का पद दिलाने पर ही राजा स्वस्थ हो सकते हैं।"

"यह कैसे संभव होगा? यह नियम हमारे देश में अनादि काल से चला आ रहा है। विक्रम का परदादा एड़ी तुड़वाकर अपने पद से हट गया। विक्रम के दादा ने आँखों से वंचित होकर अपने सेनापति का पद त्याग दिया। मगर विक्रम के परदादा का पिता कान खोकर भी ईश्वर की कृपा अनुकूल रहने के कारण सेनापति के पद पर रह सका है।" क़ानून मंत्री ने बताया।

"सो कैसे?" सब ने एक स्वर में पूछा।

कानून मंत्री इसके विवरण तो जानता न था, पर उसने जो बात कही, सो सही थी।

"ईश्वर की कृपा इस समय भी अनुकूल क्यों नहीं हो सकती?" राजपुरोहित ने पूछा।

"तब तो ईश्वर की प्रार्थना करके उनके निर्णय के द्वारा राजा को स्वास्थ्य-लाभ कराने की जिम्मेदारी आप की है।" प्रधान मंत्री ने कहा।

दरबारी जादूगर भास्कर वर्मा एक कोने में बैठा हुआ था। राजपुरोहित ने जब उस पर दृष्टि डाली तब उसने इशारा किया। तब पुरोहित को लगा कि जादूगर इसका कोई उपाय जानता है।

"अच्छी बात है। मैं भगवान की प्रार्थना करके उसके अनुग्रह को प्राप्त करने का प्रयत्न करूँगा। मैं अपनी तरफ़ से कोई कसर न रखूँगा, फिर देखें, क्या होता है?" ये शब्द कहते राजपुरोहित वहाँ से चला गया।

भास्करवर्मा ने मंदिर में पुरोहित से मिलकर अपनी योजना बताई।

दूसरे दिन राजपुरोहित ने दरबार में प्रवेश करके यों कहा: "मैं जब ध्यान मग्न था, तब मुझे एक दृश्य दिखाई दिया। विक्रम की कटी उंगली को लाकर एक कौए ने आज सवेरे मंदिर में डाल दिया

है। मुझे जो दृश्य दिखाई पड़ा, उसमें वह कटी उँगली थोड़े क्षण तक हिल रही थी। उसके इस कंपन से हमें यह साबित होता है कि भगवान हमारे अनुकूल हैं। ऐसी स्थिति में विक्रमजित हमारे पुराने संप्रदाय के अनुसार पुनः सेनापति का पद ग्रहण कर सकता है।"

"यह अद्भुत कब होगा?" प्रधानमंत्री ने पूछा।

"अगर महाराजा मंदिर में आयेंगे तो आज संध्या को ही यह अद्भुत दिखाई देगा।" पुरोहित ने उत्तर दिया।

उस दिन शाम को राजा, प्रधानमंत्री, नगर के प्रमुख नागरिक राजा के मंदिर में

पहुँचे। सबके बैठने के बाद राजपुरोहित गर्भगृह में गया। दियासलाई के दराज की आकृति और परिमाण की एक लोहे की पेटी लेकर लौट आया। उस पेटी के निछले भाग में रूई जमाई गई थी। उस पर कटी उंगली थी जो नीले रंग की लग रही थी। उसके छोर सफ़ेद थे। वह पेटी पुरोहित के बायें हाथ में थी। पुरोहित वह उंगली सबको दिखलाकर ध्यान-समाधि में लग गया। थोड़ी देर बाद आँखें खोलकर बोल उठा–"हे ईश्वर! हम पर अनुग्रह करो! आप तो सदा भक्तवत्सल रहे हैं। अपने निर्णय से अवगत कराकर हमें आनंद प्रदान करो।"

इसके तुरंत बाद पेटी के भीतर की उंगली चार-पाँच दफे ऊपर-नीचे हिल उठी। सब लोग आश्चर्य में आ गये। तब राजपुरोहित अकेले मंदिर के तालाब के पास दौड़कर पहुंचा और उंगली को उसमें डुबो दिया। पुरोहित ने अपने साथ किसी को आने नहीं दिया।

भास्करवर्मा मंदिर के पीछे पुरोहित की प्रतीक्षा में खड़ा था। उसने झट से पुरोहित के हाथ से पेटी को हटाया। राजपुरोहित के बायें हाथ की मध्यम उंगली उस पेटी के नीचे स्थित रंध्र में से बाहर आ गई। उसमें नीले रंग पोतकर उसके छोर सफ़ेद बनाये गये थे। सबने हिलती उंगली को जो देखा, वह पुरोहित की ही उंगली थी।

इस प्रदर्शन के द्वारा सबके मन में यह विश्वास जम गया कि ईश्वर की कृपा विक्रम के अनुकूल है। फिर क्या था, वह पहले की भांति सेनापति के पद पर नियुक्त हुआ। महाराजा जयंत की प्रसन्नता की सीमा न रही। विजय के उत्सव मनाये गये। पन्ना के राजा को जयंत के सामंत बने रहने की संधि हुई और उसे बंधन मुक्त किया गया। इसके बाद राजा जयंत ने विक्रमजित को अपना सेनापति बनाकर अनेक वर्षों तक सुखपूर्वक शासन किया।

सन्यास के सोपान

धर्मपुरि के निवासी मोतीलाल के दो पुत्र थे। बड़ा पुत्र हरिनाथ बीस साल का था। दूसरा पुत्र गिरिनाथ अट्ठारह साल का। हरि पढ़ाई में कच्चा निकला। दुनियादारी का ज्ञान भी नहीं रखता था। कोई काम-वाम करना बिलकुल न जानना था। गिरिनाथ अपनी पढ़ाई समाप्त कर घर लौटा। सब कोई यह कहकर उसकी तारीफ़ करने लगे कि हरि की अपेक्षा गिरि ज्यादा अक़्लमंद और सभी विद्याओं में प्रवीण है। साथ ही हरि का मजाक उड़ाने लगे। इस पर हरि के मन में अपनी ज़िंदगी के प्रति विरक्ति पैदा हुई। उन्हीं दिनों में श्रद्धानंद उनके घर भिक्षा लेने आ पहुँचा।

श्रद्धानंद एक सन्यासी था। वह एक पहाड़ी गुफ़ा में रहा करता था। सन्यासी भिक्षा के लिए गाँव में आ जाता, प्रत्येक घर से भिक्षा ग्रहण करता था।

हरि प्रति दिन श्रद्धानंद को भिक्षा देता था। एक दिन श्रद्धानंद को ज्यादा प्रसन्न देख हरि ने पूछा–"साधू महाराज! आज आप बहुत प्रसन्न क्यों हैं?"

श्रद्धानंद ने उत्तर दिया–"मैंने सभी चीज़ों से सन्यास ले लिया है। मेरे लिए चिंता का कारण क्या हो सकता है?"

हरि के दिमाग में हठात् एक बात सूझ पड़ी। उसके सन्यासी बन जाने पर गाँव के लोगों के बीच उसका आदर बढ़ सकता है। यों सोचकर हरि ने श्रद्धानंद से पूछा–"साधू महाराज, मैं भी सन्यासी बनना चाहता हूँ। कृपया बता सकते हैं कि मुझे इसके लिए क्या-क्या करना होगा?"

"बेटा, तुम बीस साल की इस जवानी में सन्यासी क्यों बनना चाहते हो? यदि फिर

भी तुम सन्यास लेना चाहते हो तो आज शाम को तुम मेरी गुफ़ा में आ जाओ। मैं तुम्हें दीक्षा दूँगा।" श्रद्धानंद ने कहा।

उस दिन संध्या को हरि श्रद्धानंद की गुफ़ा में गया। श्रद्धानंद ने कहा–"बेटा, सन्यास का मतलब सब कुछ त्यागना है। अपने माता-पिता, संपत्ति तथा 'यह मेरा है' इस भावना को भी त्यागना होगा। दुनिया के साथ किसी भी प्रकार का बँधन नहीं होना चाहिए।"

हरि ने सन्यासी के चरणों पर गिर कर कहा–"महात्मा, मैं सामान्य व्यक्ति हूँ। एक ही साथ इन सबको त्याग नहीं सकता। लेकिन ज़िंदगी से मेरे मन में विरक्ति पैदा हो गई है। मैं आप ही के पास रहकर आप की सेवा करते हुए एक-एक चीज़ को त्यागते जाऊँगा।"

श्रद्धानंद ने सोचकर कहा–"इसके लिए एक उपाय है। सीढ़ी दर सीढ़ी सन्यास लेने के उपाय मैं जानता हूँ। कहो, तुम अब किस चीज़ से सन्यास लेना चाहते हो?"

"महात्मा! घर के प्रति मेरे मन में जरा भी मोह-ममता नहीं है। इसलिए मैं सबसे पहले अपने घर से सन्यास लूँगा।" हरि ने उत्तर दिया।

"तब तो तुम आज से गृह सन्यासी हो! आज से तुम मेरे ही साथ रहो।" श्रद्धानंद ने कहा। हरि के घर न लौटने पर मोतीलाल के घर के लोग घबरा गये। दूसरे दिन श्रद्धानंद उनके घर भिक्षा लेने पहुँचा। तब बताया कि हरि पहाड़ी गुफा में सुखपूर्वक है।

सारी बातें सुनकर मोतीलाल ने सन्यासी से पूछा–"हमने उसे किस बात की कमी की? वह क्यों सन्यासी बनना चाहता है?"

"न मालूम क्यों, तुम्हारा लड़का जीवन से विरक्त है। मैं कह नहीं सकता कि यह वैराग्य आखिर तक बना रहेगा या नहीं, यदि इस वक़्त तुम लोग आकर बुलाओगे तब भी वह घर न लौटेगा। लेकिन

बराबर तुम लोगों के दिखाई देते रहने से उसका दिल बदल सकता है।" यों समझाकर श्रद्धानंद लौट आया।

इसके बाद मोतीलाल सपरिवार हरि को देखने गया। माता-पिता तथा छोटे भाई ने आँखों में आँसू भरकर गिड़-गिड़ाया। फिर भी उसने घर लौटने से इनकार कर दिया।

हरि को जमीन पर लेटते देख मोतीलाल का दिल कचोट उठा। उसने एक मुलायम गद्दा गुफ़ा में भिजवा दिया। श्रद्धानंद जो खाना खाता था, वह खाना हरि न खा सकेगा। यों सोचकर हरि की माता ने नौकर के द्वारा अच्छे अच्छे व्यंजन अपने पुत्र के पास भेजना शुरू किया।

हरि के बिस्तर के खोल बदलने के लिए अकसर एक धोबी आया-जाया करता था। एक बार वह खीझकर मन ही मन गुनगुना रहा था—"हमारे हरि बाबू को न मालूम क्या हो गया है? सन्यासी बन बैठे हैं। रोज पहाड़ पर चढ़कर आने में मेरी नानी मर रही है।" ये बातें सुनने पर हरि के मन में बिस्तर के प्रति विरक्ति पैदा हो गई। उसने वह बिस्तर धोबी के हाथ देकर घर भिजवा दिया और श्रद्धानंद से कहा—"महात्मा, आज से मैं भी आप ही की भांति जमीन पर सोना चाहता हूँ।"

"तब तो तुमने 'तल्प सन्यास' ले लिया है न?" श्रद्धानंद ने कहा।

थोड़े दिन और गुजर गये। हरि ने भांप लिया कि उसके लिए भोजन लानेवाला नौकर भी लाचार होकर भोजन ला रहा है। इस पर हरि ने श्रद्धानंद से कहा–"आज से मैं स्वादिष्ट भोजन करना नहीं चाहता। आप जो भोजन करेंगे, वही मैं भी करूँगा।" इसके बाद उसने नौकर द्वारा खाना मँगवाना बंद किया

श्रद्धानंद ने हरि की प्रशंसा करते हुए कहा–"बेटा, तुम्हारा मन धीरे धीरे परिपक्व होता जा रहा है। अब तुम जिह्वा सन्यासी भी हो गये हो।"

सन्यासी की बातें सुन हरि बड़ा खुश हुआ। अपने पुत्र की विरक्ति बढ़ते देख मोतीलाल ने हरि को घर ले जाने का प्रयत्न किया, लेकिन हरि ने न माना।

अंत में मोतीलाल ने हरि को धमकी भी दी–"तुम फिर एक बार सोच लो, आज तुम हमारे साथ घर न लौटोगे तो मेरी जायदाद में से तुम्हें एक कौड़ी भी न मिलेगी। तुम्हें सदा के लिए सन्यासी की भांति यहीं पर पड़े रहना पड़ेगा।"

हरि की माता ने भी ऐसे पुत्र को जन्म देने पर अपने दुर्भाग्य की निंदा की।

पर हरि ने शांति के साथ कहा–"माँ! तुम चिंता न करो। आज से मेरे कोई माता-पिता भी नहीं हैं। फिर कभी मेरे वास्ते आने की ज़रूरत नहीं है।"

फिर क्या था, मोतीलाल तथा उसकी पत्नी दुखी हो वहाँ से चले गये।

इसके बाद हरि ने श्रद्धानंद के पास जाकर सारी बातें कह सुनाईं।

"बेटा, तुम इस क्षण से 'बंधु सन्यासी' भी हो गये हो। तुम शीघ्र ही पूर्ण रूप से सन्यासी बन सकोगे।" श्रद्धानंद ने कहा।

थोड़े दिन बीत गये। एक दिन अप्सरा जैसी सोलह साल की कन्या हरि को देखने आई। उसको देखते ही हरि की आँखें चमक उठीं।

"तुम कौन हो?" हरि ने पूछा।

"क्या तुमने मुझे नहीं पहचाना?" कन्या ने उल्टा सवाल किया।

हरि ने युवती को ध्यानपूर्वक देखा, तब कहा–"नलिनी, तुम हो?" नलिनी हरि की ममेरी बहन थी। उसने पाँच साल पूर्व नलिनी को देखा था। इस बीच उसके मामा का परिवार दूसरे शहर में चला गया था।

"हरि, हम लोग कल ही गाँव लौटे हैं। तब से मैं तुम्हीं को खोज रही थी। तुम यहाँ क्यों हो?" नलिनी ने पूछा।

"मैं इस वक़्त सन्यासी हूँ। मेरे अपने घर-द्वार, माता-पिता कोई नहीं हैं।" हरि ने जवाब दिया।

"तब तो तुम्हारा साथ देनेवाले कोई नहीं है?" नलिनी ने पूछा।

"मुझे किसी की मदद की जरूरत नहीं। इसी जिंदगी में मुझे प्रसन्नता है।" हरि ने निर्लिप्त भाव से उत्तर दिया।

"तब तो मेरा क्या हाल होगा? मैं तुम से प्यार करती हूँ!" नलिनी ने पूछा।

"नलिनी, तुम मुझसे प्यार करती हो? मुझ में ऐसी क्या बात है, जिसे देख तुम मुझसे प्यार करने लगी हो? मैं अपने भीतर कोई खास बात न पाकर ही यों सन्यासी बन गया हूँ।" हरि ने कहा।

"हरि, यह तुम क्या कहते हो? तुम्हें देखने पर मुझे बार-बार तुम्हीं को देखने की इच्छा होती है। तुम्हारी बातों को सुनने पर बार-बार सुनने की इच्छा होती है। तुम्हारे बिना मैं जी नहीं सकती,

हरि!" नलिनी ने दिल की बात बताई। नलिनी की बातें सुनने पर हरि को बड़ा आनंद आया, बोला–"मैं इस वक़्त सर्वस्व परित्याग कर चुका हूँ। मेरे प्रति तुम अपनी ममता को बढ़ाने की कोशिश न करो। यदि तुम मुझे फिर देखना चाहती हो तो कल आ जाओ!"

उस दिन रात हरि को नींद न आई। उसे लगा कि कल सवेरे नलिनी पुनः आ जावे तो क्या ही अच्छा होगा! दूसरे दिन नलिनी आ पहुँची। उसे देखते ही हरि का चेहरा खिल उठा।

"हरि, तुम्हारे बिना मुझे वह घर नरक तुल्य मालूम होता है। मैं भी यहीं तुम्हारे साथ रह जाऊँगी। मुझे भी सन्यास दिला दो।" नलिनी ने हठ किया।

इसके बाद हरि श्रद्धानंद के पास पहुँचा और धीरे से पुकारा–"महात्मा!"

"बेटा, क्या बात है? इस बार तुम किस चीज़ से सन्यास लेना चाहते हो?" श्रद्धानंद ने निश्चल भाव से पूछा।

"महात्मा! इस बार मैं सन्यास से सन्यास लेना चाहता हूँ।" हरि ने कहा।

श्रद्धानंद हरि की बातें सुन चौंक पड़ा। इसके बाद सारा वृत्तांत हरि के मुँह से सुनकर बोला–"अच्छी बात है, बेटा! जाओ! आज तक तुम्हारे प्रति कोई विशेष अनुरक्ति दिखानेवाला न था, इसलिए जीवन के प्रति तुम्हारे मन में विरक्ति पैदा हो गई थी। तुम्हारे साथ प्यार करनेवाली एक युवती की बातों ने तुम को यथा प्रकार एक मानव बनाया। तुम सुखी रहो और तुम्हारे साथ प्यार करनेवाली युवती को भी सुखी रखो।"

हरि ने श्रद्धानंद के चरणों पर गिरकर प्रणाम किया और उनके आशीर्वाद लेकर नलिनी के साथ अपने घर लौटा। हरि में यह परिवर्तन देख सब कोई उसके प्रति पूर्वाधिक स्नेह दिखाने लगे। इस पर हरि को बड़ा संतोष हुआ। इसके बाद वह नलिनी के साथ विवाह करके अपने दिन आनंदपूर्वक बिताने लगा।

व्यापार का राज

एक गाँव में सोमगुप्त नामक एक व्यापारी था। वह बचपन से ही गाँववालों के साथ नम्रतापूर्ण व्यवहार करते उनके सहयोग पर व्यापार करते हुए अच्छा नाम भी प्राप्त कर चुका था।

सोमगुप्त के दो पुत्र थे। सोमगुप्त का विचार था कि वे लोग भी गाँव की जनता में अपने को एक मानकर अपनी ज़िंदगी बसर करें। बड़ा पुत्र अपने पिता सोमगुप्त के विचारों के अनुकूल चलनेवाला था, लेकिन छोटा पुत्र काशीपति महत्वाकांक्षी था। वह इस बात का सपना देखने लगा कि भारी पैमाने पर व्यापार करके लाखों रुपये कमाये और धन्ना सेठ बन जाये।

सोमगुप्त को जब अपने छोटे पुत्र के विचारों का पता चला, तब उसने सलाह दी–"बेटा, जो व्यापारी दूसरों का हित अपना हित मानता है, वह ऐसा भारी व्यापार नहीं कर सकता। जो लोग भारी पैमाने पर जनता को दगा देने में संकोच नहीं करते, वे ही लोग ऐसे व्यापार कर सकते हैं। हम लोग सबके साथ साधारण जीवन यापन करें, यही बड़ी बात है।"

लेकिन काशीपति को अपने पिता की सलाह में पुराने विचारों की गंध आई। उसने कहा–"हम लोग जो व्यापार इस वक़्त करते हैं, क्या यह भी कोई व्यापार है? हमारी यह ज़िंदगी भी कोई ज़िंदगी है? मैं इस गाँव में अब एक दिन भी रहना पसंद नहीं करूंगा।" यों कहकर वह उसी वक़्त शहर की ओर चल पड़ा।

काशीपति ने बचपन में कभी एक बार अपने पिता के साथ उस शहर को देखा था, अब वह शहर बिलकुल बदल चुका था। ऊँची-ऊँची रंग-बिरंगी इमारतें, जनता की अपार भीड़ से भरी गलियाँ,

हरीश तिवारी

आँखों को चौंधियानेवाली बड़ी-बड़ी दूकानें, वाहनों पर ले जाया जानेवाला माल, दूकानों में रुपयों के बण्डल—इन सबको देखने के बाद काशीपति का निर्णय और पक्का हो गया। उसने सोचा, शहर में व्यापार करनेवाले लोग भी आखिर मनुष्य ही हैं, पर उसके पिता जैसे कायर नहीं!

काशीपति ने घर लौटकर कहा—"मैंने शहर में व्यापार करने का निश्चय कर लिया है। इसलिए मुझे पूंजी की ज़रूरत है, अत: मेरे हिस्से की संपत्ति मुझे दी जाय।"

सोमगुप्त की समझ में न आया कि क्या किया जाय? उसने अपने पटवारी मित्र के पास जाकर सलाह माँगी। पटवारी सोच समझकर बोला—"सुनो दोस्त! तुम्हारा पुत्र शहर में व्यापार करके लखपति बनना चाहता है। उसके इस भ्रम को दूर करना है तो थोड़ा-बहुत तुम्हें खर्च करना पड़ेगा। शहर जाने से उसे रोकने पर उसका भ्रम और बढ़ता जाएगा।"

"तब तो क्या जमीन-जायदाद का बंटवारा करना ही पड़ेगा?" सोमगुप्त ने चिंतापूर्ण स्वर में पूछा।

"बात वहाँ तक बढ़ने न देंगे।" इन शब्दों के साथ सोमगुप्त को कोई उपाय बताकर पटवारी ने उसे घर भेज दिया।

सोमगुप्त ने घर लौटकर अपने पुत्रों से यों कहा—"सुनो बेटे! मैंने जायदाद बांटने का निश्चय कर लिया है। तुम यह मत समझो कि शहर में जाकर भारी पैमाने पर व्यापार करना मैं नहीं चाहता। लेकिन हमारी गृहस्थी की एक ऐसी बात है जिससे तुम दोनों अपरिचित हो। हम कर्ज के भार से दबे हुए हैं, यह बात तुम्हें कभी कहनी थी, लेकिन तुम लोग दुखी हो जाओगे, इस ख्याल से मैंने नहीं कहा। अब उसे गुप्त रखना संभव नहीं है। हमारे बंटवारे की बात सुनते ही कर्जदार आ धमकेंगे। इसलिए कर्ज के चुकता करने के बाद जो कुछ बचेगा, उसे हम लोग बराबर बांट

लेंगे। फिर सबका अपना अपना राग और अपनी अपनी ढफली होगी।"

इसके बाद सोमगुप्त अपने दोनों पुत्रों को साथ लेकर पटवारी के घर पहुँचा। पटवारी ने तीनों को बिठाया और एक पुरानी बही लाकर उनके सामने रख दी।

उसे देखने पर काशीपति का कलेजा कांप उठा। उसने आवेश में आकर अपने पिता से पूछा–"पिताजी! तुमने इतना सारा कर्ज क्यों लिया? किसने तुमसे यह कर्ज लेने को कहा था? आज तक तुमने इसे क्यों नहीं चुकाया?"

पटवारी ने इतमीनान से उत्तर दिया– "सुनो बेटा! तुम्हारे पिता ईमानदार और बुजुर्ग हैं, इसलिए मैं आज तक सहन करता रहा। चाहे तो मैं इसी वक़्त तुम्हारी सारी संपत्ति पर अधिकार करके तुम लोगों को घर से निकाल सकता हूँ।"

काशीपति पागल की भांति बाल नोचते बोला–"सुनिये पटवारी साहब, मैंने शहर में जाकर भारी पैमाने पर व्यापार करके अपार धन कमाना चाहा। लेकिन मेरे पिता जैसे कंगाल के घर पैदा होने के कारण मुझे रोने की इच्छा हो रही है। आप ही कृपया कोई उपाय सुझाइए। इस प्रकार एक कीड़े-मकोड़े की भांति जीने की अपेक्षा मर जाना कहीं उत्तम है।"

"घबराओ मत बेटा! अगर तुम ऐसे क़ाबिल आदमी हो तो तुम्हारे पिता की दरिद्रता भी दूर हो जाएगी। मेरा कर्ज
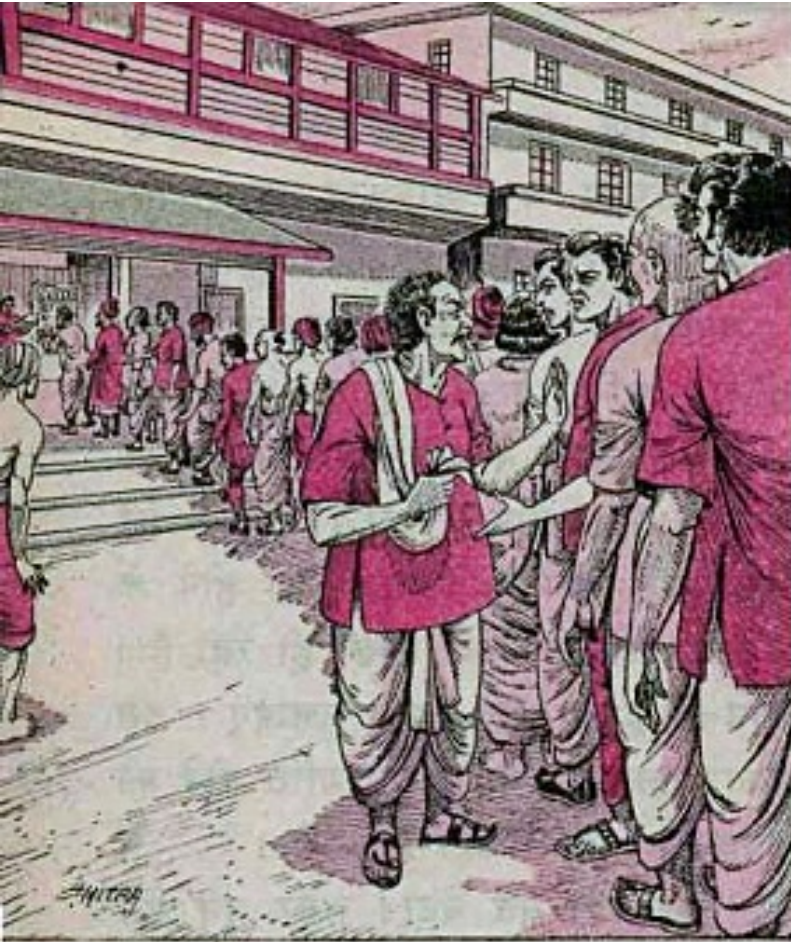
भी चुक जाएगा। इस वास्ते में तुम्हें थोड़ा-बहुत धन की सहायता दे सकता हूँ।" इन शब्दों के साथ पटवारी दो हज़ार रुपये ले आया, काशीपति के हाथ देकर बोला—"अगर व्यापार में यह धन डूब गया तो चिंता न करो। मेरे पास आ जाओ, मैं तुम्हें फिर धन दूँगा। न मालूम क्यों, तुम्हारे प्रति मेरे मन में गहरा विश्वास जम रहा है।"

काशीपति अपने कानों पर यक़ीन न कर पाया। उसने पटवारी से कहा—"आप का कर्ज चुकाना कोई बड़ी बात नहीं, साल भर बाद देखिए, इस धन को मैं कितने हज़ारों में बदल सकता हूँ।"

काशीपति के चले जाने पर पटवारी ने सोमगुप्त से कहा—"इस बार या तो तुम्हारे बेटे की अक्ल ठिकाने लग जाएगी, या फ़ायदा होगा।"

सोमगुप्त ने हँसकर कहा—"जो भी प्राप्त हो मेरे लिए अच्छा ही है।"

काशीपति दो हज़ार रुपये लेकर शहर पहुंचा। एक व्यापारिक केन्द्र में दूकान किराये पर लिया। अन्य व्यापारियों के साथ विचार-विमर्श करके उनकी सलाह पर इमली तथा हल्दी खरीदी। व्यापार अच्छा चला। इसका ख़ास कारण था कि उसने और व्यापारियों की अपेक्षा अपना माल सस्ते में बेचा। माल खरीदने में काशीपति ने व्यापारियों की सलाह ज़रूर ली, पर बेचने के संबंध में उनकी सलाह की परवाह नहीं की। पर इस व्यापार में वैसे काशीपति को बड़ी बचत न हुई, लेकिन थोड़ा फ़ायदा ज़रूर हुआ। मगर व्यापारियों ने काशीपति की खूब तारीफ़ की और बताया कि तुमने व्यापार में अपनी बुद्धिमत्ता का अच्छा परिचय दिया है, भविष्य में तुम काफ़ी आगे बढ़ सकते हो।

"आप का सहयोग मुझे एक बार और चाहिए, कृपया बताइये कि इस बार कौन-सा माल खरीदना ज्यादा लाभदायक होगा?" काशीपति ने पूछा।

"तुम्हारे यहाँ से इमली और हल्दी खरीदकर छोटे व्यायारियों ने रख लिया है, अब उन चीजों की ज्यादा माँग न होगी। फिलहाल ज्यादा माँग तो प्याज की है।" व्यापारियों ने सलाह दी।

काशीपति ने उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट की। दूसरे दिन समुद्री तटीय प्रदेश में जाकर प्याज खरीदा और अपनी दूकान में भर दिया।

वास्तव में उन दिनों में प्याज की कोई बड़ी माँग न थी। उस साल प्याज की फ़सल ज्यादा हुई थी। साथ ही व्यापारियों ने प्याज सस्ते दाम पर बेचना शुरू कर दिया था। प्याज का भाव देख काशीपति का सर चकरा गया। क्योंकि उसने जिस भाव से खरीदा था, उससे कहीं सस्ते में उस शहर में प्याज बिक रहा था। काशीपति ने व्यापारियों से पूछा—"तुम लोग प्याज इतने सस्ते भाव क्यों बेच रहे हो?"

"क्योंकि हमने इससे भी सस्ते भाव में खरीदा था। इसी भाव पर हमें फ़ायदा हो रहा है; लेकिन तुम्हें जल्दबाजी करने की कोई जरूरत नहीं। तुम अपना माल नुक़सान पर मत बेचो। चार-पाँच दिनों में हमारा माल बिक जाएगा, तब तुम्हारे माल की माँग बढ़ जाएगी!" व्यापारियों ने सुझाया।

काशीपति ने जिन कमरों में प्याज भर दिया था, उन्हें ताले लगवाये। कई दिन गुजर गये, पर बाज़ार में प्याज की माँग
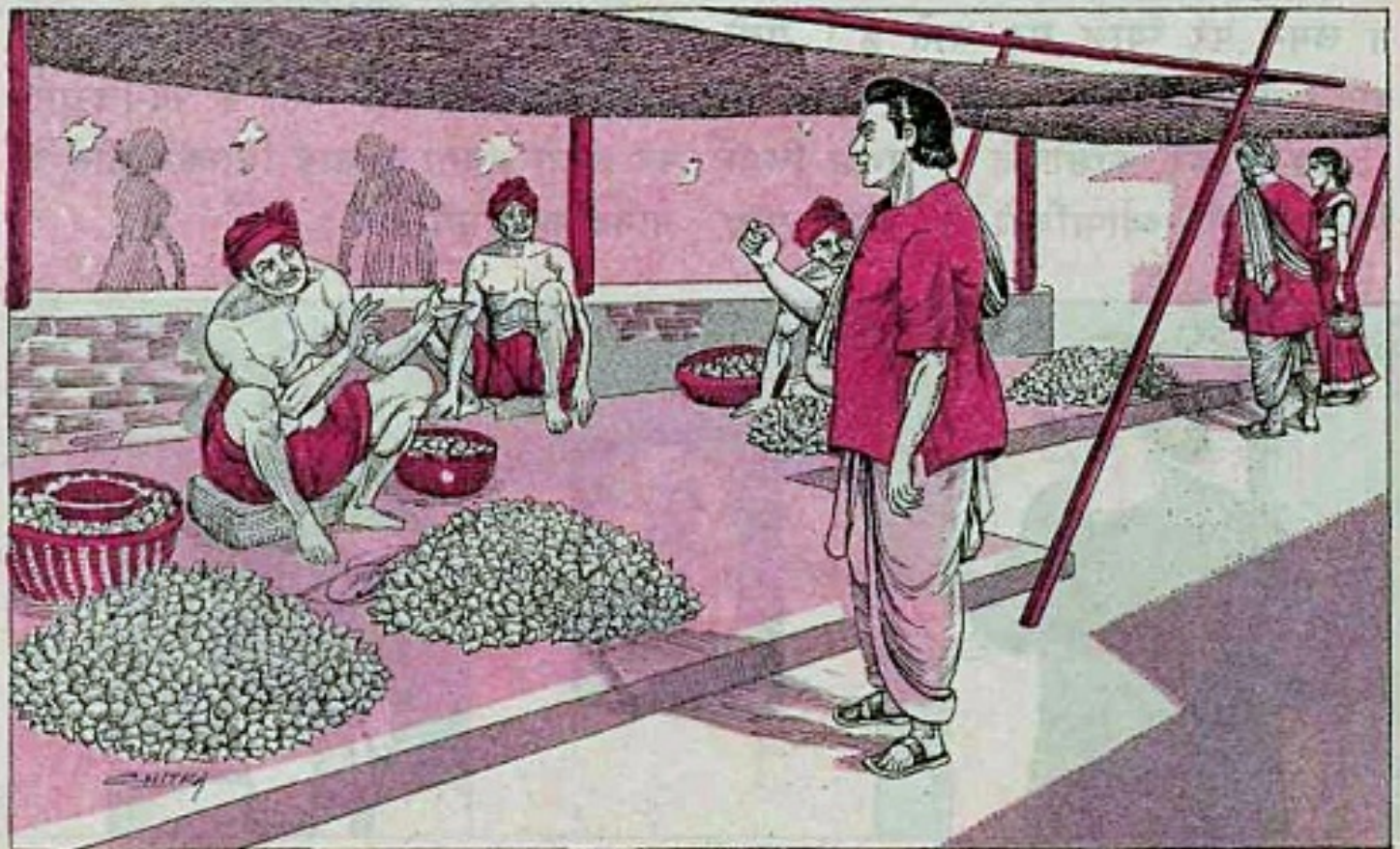
नहीं बढ़ी। उसने व्यापारियों से इसका कारण पूछा। उन लोगों ने बताया– "भाई साहब! व्यापार में जल्दबाजी चलने की नहीं, हिम्मत से काम लेना होता है।" यह सलाह देकर सब लोग मन ही मन हँस पड़े। इस बीच एक ऐसी घटना घटी कि काशीपति की दूकान के चारों तरफ़ रहनेवाले लोग उसकी आलोचना करने लगे।

कुछ लोगों ने यहाँ तक धमकी दी– "तुम तुरंत अपने कमरों को खाली कर दो। तुम्हारे प्याज सड़कर बदबू दे रहे हैं। उसे हम सहन नहीं कर पाते हैं।"

कमरे खोलकर काशीपति ने देखा, सारा माल सड़ गया था।

इस पर सबने उसे ताने दिये–"भाई साहब, तुम यह भी नहीं जानते कि हवा के न लगने पर प्याज सड़ जाते हैं। ऐसी हालत में तुम व्यापार करने कैसे निकले?"

तब जाकर काशीपति ने समझ लिया कि सहयोगी व्यापारियों ने उसके साथ कैसे दगा दिया है। उसने मन में सोचा– 'शहर में सब कहीं धोखा है, दगा है! ऊपरी चमक-दमक ज्यादा है।'

इसके बाद मजदूर लगाकर काशीपति ने सड़े-गले माल को दूकान से बाहर फिंकवा दिया और खाली हाथ घर लौट आया।

पटवारी ने काशीपति से पूछा–"क्यों बेटा? और रुपये चाहते हो?"

"नहीं साहब! आप का ऋण चुका सकूँ तो यही बड़ी बात होगी मेरे लिए।" काशीपति ने सारा किस्सा सुनाकर कहा।

"अच्छी बात है, सुनो! तुममें यह परिवर्तन लाने के लिए ही हमने यह नाटक रचा है। मैंने जो तुम्हें धन दिया है, वह तुम्हारे पिता का ही था। तुम्हारे पिता मेरे कर्जदार नहीं हैं।" पटवारी ने कहा।

ये बातें सुनने पर काशीपति को लगा कि उसका बोझ थोड़ा हल्का हो गया है। इसके बाद वह अपने पिता के पद-चिह्नों पर चलते जनता के साथ मिलकर जीने के आनंद का भागी बना।
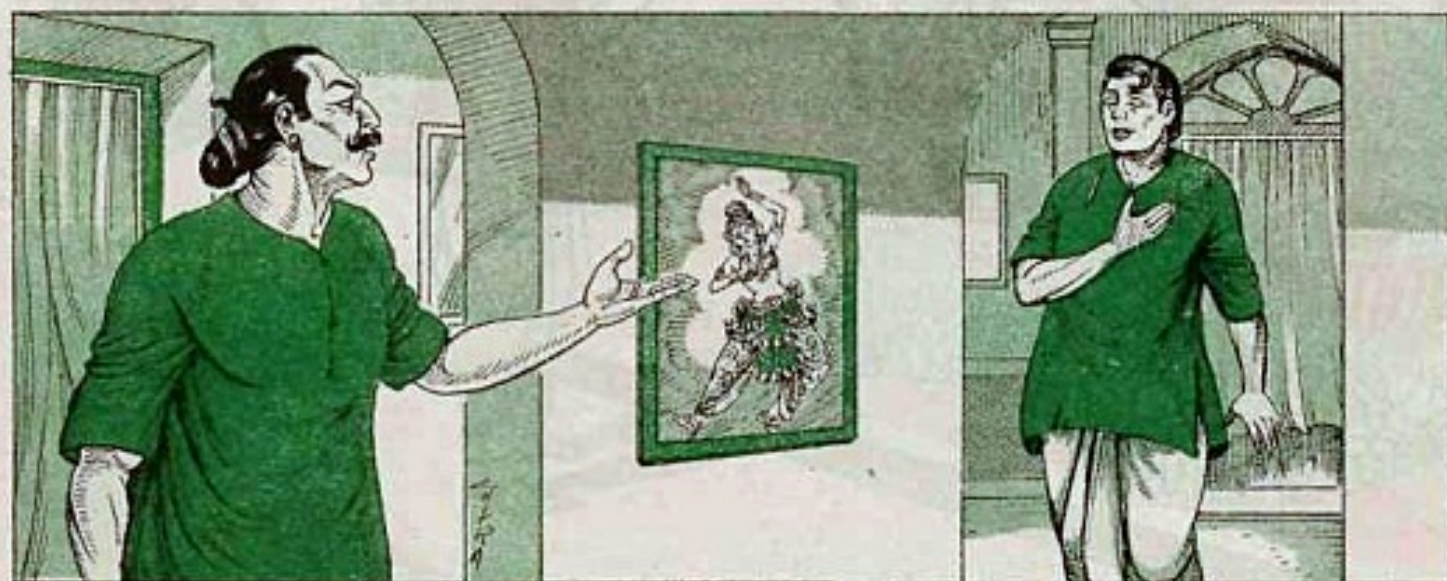
सौदे का सहयोग

एक नगर के चौक में फलों की दूकान थी। गरमी का मौसम था। दूकानदार ने आम मँगवाकर बेचना शुरू किया।

एक दिन एक व्यक्ति ने आकर दूकानदार से पूछा कि उसे कोई काम दे, पर दूकानदार ने इनकार किया।

इस पर उस व्यक्ति ने कहा–"तब तो आप एक काम कीजिए। आप की दूकान में जो छोटे-छोटे फल हैं, उन्हें मेरे हाथ दे दीजिए। मैं उन्हें बेच दूँगा। आप जो उचित समझें, सो दे दीजिए।" व्यापारी ने थोड़े फल दिये। वह व्यक्ति समीप में ही उन फलों को बेचने लगा।

फलों की दूकान में बिक्री जोरों पर हुई। छोटे फल ले जानेवाले व्यक्ति ने शाम को सारे फल लौटाते हुए कहा कि उसकी मेहनत को देखते हुए जो उचित समझें, दे।

दूकानदार ने कहा–"तुमने तो एक भी फल नहीं बेचा।"

"बात सही है, मैंने नहीं बेचा, मगर आप के फलों के बिकने में सहयोग दिया। मैंने अपने छोटे फलों का भाव आप के बड़े फलों से ज्यादा बताया; लोगों को लगा, आप के बड़े फल सस्ते हैं। इसलिए आप के फल ज्यादा बिके।" उस व्यक्ति ने कहा।

दूकानदार को उसकी बातें सच्ची लगीं, उसने उसे थोड़े पैसे देकर भेज दिया।
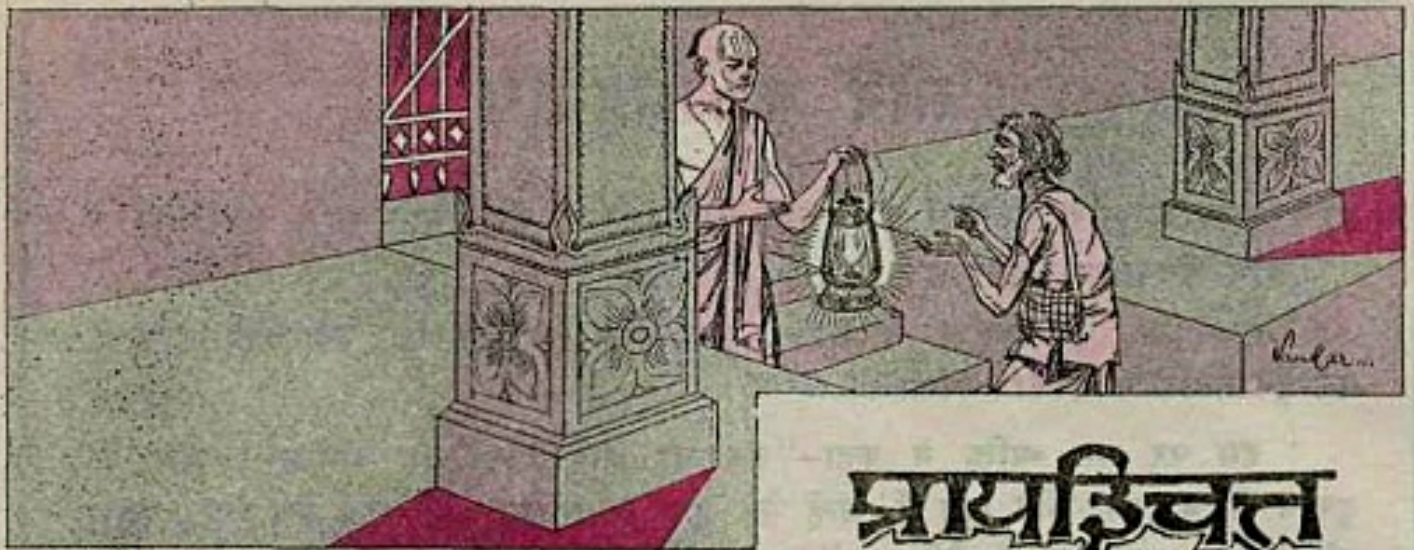
प्रायश्चित्त

एक गाँव में बालाजी का मंदिर था। आस-पास के गाँवों के लोग उस मंदिर में पूजा करने आया करते थे।

एक दिन रात को पुजारी मंदिर के द्वार बंद कर लालटेन हाथ में ले ज्यों ही बाहर आया, त्यों ही एक दुर्बल व्यक्ति ने पुजारी के सामने आकर गिड़गिड़ाया– "पुजारीजी! क्या एक बार मंदिर के द्वार खोलने की कृपा करेंगे? मैं भगवान के दर्शन करके चला जाऊँगा।"

पुजारी ने उस व्यक्ति की ओर एड़ी से लेकर चोटी तक देखा और कहा–"भगवान की शयन-सेवा भी समाप्त हो गई है। अब कल सवेरे ही द्वार खोले जा सकते हैं।"

"क्या मुझे आज रात भर इंतज़ार करना पड़ेगा?" वृद्ध गुनगुनाने लगा।

"आज रात भर तुम इसी चबूतरे पर सो जाओ।" यों कहकर पुजारी चला गया। बूढ़ा उस अंधेरे में टटोलते हुए चबूतरे पर जाकर बैठ गया। उसे अपने गत जीवन की स्मृतियाँ याद आने लगीं।

वृद्ध का नाम वेंकटपति था। वह गृहस्थ तो बना, पर संपत्ति जोड़ न पाया। उसके एक बूढ़ा रिश्तेदार था। वेंकटपति जानता था कि उस बूढ़े के मरने पर उसकी सारी संपत्ति पर उसी का अधिकार होगा। मगर उसके ज़िंदा रहते बूढ़े ने उसे अपने पास तक पटकने न दिया। वेंकटपति और उसकी पत्नी इस आशा से बैठे रहे कि कब उसकी मौत हो जाएगी और कब उन्हें वह संपत्ति हाथ लगेगी।

आख़िर बूढ़ा मर गया। यह ख़बर मिलते ही पति-पत्नी बूढ़े के घर पहुँचे। वेंकटपति ने बूढ़े के दहन-संस्कार किये। इसके बाद पति-पत्नी ने सारा घर छान डाला, पर एक कौड़ी भी उनके हाथ ॥

अनीता वर्मा

लगी। पूजा के कमरे में पुराने जमाने की बनी बालाजी की तांबे की एक मूर्ति को छोड़ कोई भी क़ीमती वस्तु उन्हें न मिली। वेंवटपति की समझ में न आया कि बूढ़े ने अपनी सारी संपत्ति कहाँ छिपा रखी है।

"यह तांबे की मूर्ति हमारा पेट थोड़े ही भरेगी?" यों कहते वेंकटपति उसे फेंकने को हुआ। वेंकटपति की पत्नी ने उसका हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा– "हममें सोचने का दिमाग हो तो सारी चीजें मिल सकती हैं।" इन शब्दों के साथ उसने वेंकटपति को कोई उपाय बताया।

वेंकटपति ने अपनी पत्नी की सलाह पर उसकी तारीफ़ की और उस मूर्ति को एक पुराने कपड़े में लपेटकर गुप्त रूप से अपने घर उठा लाया।

दूसरे दिन सारे गाँव में आग की भांति यह खबर फैल गई कि वेंकटपति के घर के पिछवाड़े के बाग में बालाजी प्रकट हुए हैं। उसकी पत्नी के शरीर में भगवान ने प्रवेश किया है। बस, लोग दल बांधकर उसके दर्शन को आगे बढ़े। मूर्ख जनता ने भारी मात्रा में भेंटें चढ़ाईं।

वेंकटपति की पत्नी आँखें मूंदकर केश बिखरे बैठी रही। भक्तों के सवालों के जवाब वह इस तरह देने लगी जैसे स्वयं बालाजी ही देते हो। भक्त तो तन्मय हो उठे। जब वेंकटपति की पत्नी की सहनशीलता जाती रही, तब वह बेहोशी

का अभिनय करके उठ बैठी। मूर्ख प्रजा यह सोचकर अपने घर चली गई कि अब भगवान वेंकटपति की पत्नी के शरीर से उतर गये हैं। तब उन दोनों ने भेंटों को गिनकर देखा। पति-पत्नी ने परस्पर अभिनंदन करते हुए कहा–"वाह, यह तो अद्भुत योजना है।"

इसके बाद उस पुरानी मूर्ति को अपने घर के मध्य प्रतिष्ठित किया गया। हर शनिवार को बालाजी वेंकटपति की पत्नी के शरीर में प्रवेश कर जाते थे! भक्तों का परामर्श करते थे। यह समाचार धीरे-धीरे आसपास के गाँवों में भी फैल गया। लोग दल बांधकर आने लगे।

अब वेंकटपति के दिमाग में एक और बड़ा उपाय सूझा। छोटी-छोटी भेंटों से फ़ायदा ही क्या है! एक हुंड़ी रखकर बालाजी के लिए मंदिर बनवाने के ख्याल से लोगों को ज्यादा भेंटें देने की प्रेरणा दी। उसकी पत्नी ने वेंकटपति के इस उपाय की बड़ी सराहना की।

दूसरे दिन वेंकटपति एक बहुत बड़ा तांबे का कलश लाया। उस पर हल्दी में भिगोया गया एक वस्त्र बांध दिया। वेंकटपति की पत्नी भक्तों से बालाजी की वाणी में कहने लगी–"तुम लोगों में जो पुण्यात्मा हैं वे सब मेरे वास्ते एक मंदिर बनवा दो। पर याद रखो, तुमने ईमानदारी से जो धन कमाया वही हुंडी में डाल दो। अन्यायपूर्वक कमाया हुआ धन इसमें डालोगे तो वह ठीकरों में बदल जाएगा।"

हुंडी में धन भरने लगा। छे महीनों में हुंडी सचमुच भर गई।

"यह धन हमारे लिए पर्याप्त है। दूर के प्रदेश में जाकर हम इस धन से आराम से जीयेंगे।" पति-पत्नी ने योजना बनाई।

मगर उस कलश को सबकी आँख बचाकर उठा ले जाना मुश्किल था। क्योंकि वहाँ पर लोगों का आना-जाना होता था। खूब सोच-विचारकर वेंकटपति की पत्नी ने अपने पति के द्वारा उसी

प्रकार का एक दूसरा कलश मँगवाया, उस पर भी हल्दी में भिगोया हुआ कपड़ा बांधा; उसमें ठीकरें भर करके मूर्ति के बाजू में रखा और असली कलश को चीथड़ों से लपेटकर अलग रखना चाहा।

तब अपनी योजना उसने अपने पति को बताई–"आधी रात के वक़्त हम दोनों चुपके से यहाँ से निकल जायेंगे। अंध विश्वास रखनेवाले भक्त यही सोचेंगे कि उनका धन अन्यायपूर्वक कमाया गया होने के कारण ठीकरों में बदल गया है। इसीलिए हम लोग अप्रसन्न हो चले गये हैं।"

संध्या के होते ही वेंकटपति पिछवाड़े में गया। ठीकरें चुनकर नया कलश भर दिया। पुराने कलश को ले जाकर दर्वाजे की ओट में रखा और नये कलश को मूर्ति के निकट रख दिया। इस बीच उसकी पत्नी सो गई।

इसके बाद वेंकटपति के मन में कोई शंका पैदा हो गई। सारे भक्तों की कमाई अन्यायपूर्वक कमाई गई नहीं हो सकती। इसलिए उसने पुराने कलश में से थोड़े सिक्के निकालकर नये कलश की ठीकरों पर डाल दिया और इसके बाद वह भी सो गया।

आधी रात के बीतने पर उसकी पत्नी ने वेंकटपति को जगाया। सवेरा होने के पहले ही वहाँ से निकल जाना उचित होगा। वरना सवेरे खेतों में काम करने जानेवाले उन्हें भागते देख लेंगे।

यों सोचकर वेंकटपति हड़बड़ाकर उठ बैठा। दर्वाजे की ओट में चीथड़ों से लपेटे

कलश को उठाकर अपने सिर पर रख लिया, तब पति-पत्नी दोनों घर से निकल पड़े। सवेरे होने तक वे गाँव से बहुत दूर निकल गये। दुपहर के समय एक निर्जन प्रदेश में दोनों ने थोड़ी देर आराम किया, फिर यह सोचकर कलश खोल दिया कि किसी गाँव में पहुँचने के पहले खर्च के वास्ते थोड़े से सिक्के हाथ में रख ले।

दोनों एक साथ चीख उठें। क्योंकि कलश में थोड़े सिक्कों को छोड़ ठीकरें भरी पड़ी थीं। बात यों हुई कि वेंकटपति की पत्नी ने नींद से जागते ही इस ख्याल से मूर्ति के निकट के कलश में हाथ रखकर देखा कि कहीं कलश बदल दिये गये या नहीं। कलश में ठीकरों के ऊपर सिक्के उसके हाथ लगे। उसी को उसने पुराना कलश समझ लिया और उसे दर्वाजे की ओट में रख दिया और असली कलश को लाकर मूर्ति के निकट रखा।

इस भूल का पता लगते ही वेंकटपति की पत्नी पागल हो गई और उसने खाट पकड़ लिया। थोड़े ही दिन बाद उसकी मृत्यु हो गई। वेंकटपति तो मरा नहीं, पर थोड़े दिन तक उसने कुत्ते की ज़िंदगी बिताई। आखिर अपने पापों का पश्चात्ताप करने लगा। उसके मन में यह विचार आया कि वे लोग जो धन छोड़ आये हैं, उससे यदि लोगों ने मंदिर बनवा दिया हो तो उस मंदिर में प्रतिष्ठित भगवान के दर्शन करके अपने पापों का परिहार कर लेना चाहिए। यह सोचकर अपने दुर्बल शरीर को घसीटते वेंकटपति अपने गांव लौटा, उसे अपने घर की जगह एक सुंदर मंदिर दिखाई दिया। उसे अपार आनंद हुआ, पर भगवान के दर्शन नहीं हुए।

वेंकटपति यह सोचते वहीं लुढ़क पड़ा—"सवेरा होते ही भगवान के दर्शन करके उनसे हृदयपूर्वक क्षमा माँग लेनी है। अपने पापों का परिहार कर लेना है।"

लेकिन यह संभव न हो सका। क्योंकि वेंकटपति चबूतरे पर जो लेटा, फिर उठ न पाया। चिरनिद्रा में खो गया।
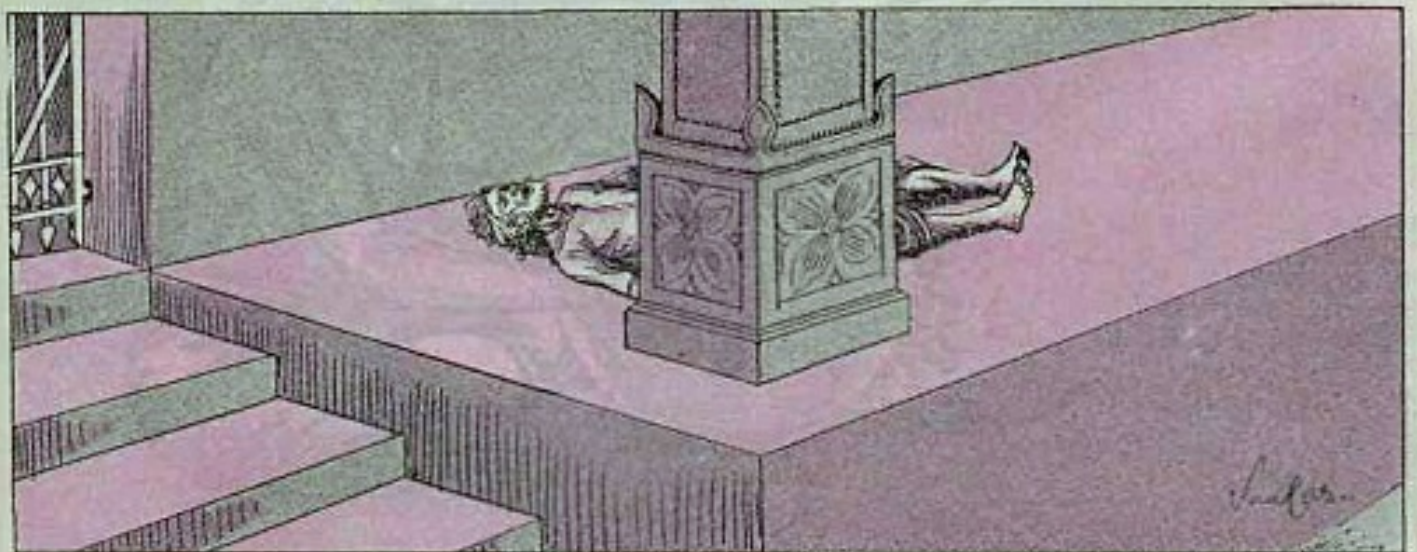
एक गाँव में व्रजभूषण नामक एक जमींदार था। उसके विरूप नामक विवाह योग्य एक पुत्र था। वह रात के वक़्त अपने घर के पिछवाड़े में स्थित पीपल के नीचे सोया करता था। सवेरे जागते ही पेड़ पर के पक्षियों को देख प्रसन्न हो उठता था।

एक दिन सवेरे विरूप ने नींद से जागते ही पेड़ की ओर देखा और चीख़कर बेहोश हो गया। अपने बेटे की चीख़ सुनकर व्रजभूषण घटना स्थल पर पहुँचा, अचेत पड़े अपने पुत्र को नौकरों के द्वारा घर के भीतर पहुंचा दिया।

थोड़ी देर में विरूप होश में तो आया लेकिन वह पागल की तरह देखते अंट-संट बकने लगा। विरूप की इस हालत पर व्रजभूषण के घबराने का एक और कारण भी था। क्योंकि उसी दिन विरूप की शादी तै करने कन्या पक्ष के लोग आनेवाले थे। व्रजभूषण ने कन्या पक्षवालों के पास ख़बर भेजी कि वे एक हफ़्ते बाद आवे, तब पड़ोसी वैद्य माधवाचार्य को बुला भेजा।

माधवाचार्य ने विरूप की जांच करके कहा—"वैसे लड़का बीमार नहीं है। शायद किसी कामिनी पिशाचिनी ने इसे ग्रस लिया है। या किसी भूत-प्रेत को देख यह डर गया होगा! हमारे मठ में कोई साधू आये हुए हैं, चलो, उन्हें एक बार दिखला देंगे।"

इसके बाद लड़के को लेकर दोनों मठ में पहुँचे। उस वक़्त एक व्यक्ति साधू के चारों तरफ़ चक्कर काट रहा था, कहा गया कि उसे भूत ने ग्रस लिया है। साधू ने अपने हाथ की छड़ी से उस व्यक्ति के सर पर तीन बार प्रहार किया, फिर क्या था, उसका भूत उतर गया। व्रजभूषण का विश्वास साधू पर जम गया।

दिनेश सिन्हा

ब्रजभूषण और माधवाचार्य ने घर लौटकर दोनों भूतवैद्यों को जो मांत्रिक थे, बुला भेजा। शरभ ने विरूप की जांच करके बताया—"मैं इसका इलाज नहीं कर सकता।" उसके चले जाने पर सांबु ने कहा—"मैं इसका इलाज करूंगा। आज रात तो अंजन लगाकर मैं पता लगाऊँगा कि यह किसकी करतूत है? शरभ पैसे के पीछे पागल रहता है। मेरा संदेह है कि यह काम उसी ने किया है। इसलिए वह यहाँ से चुपके से खिसक गया है। मैं उसकी पोल खोल दूंगा।"

दोनों मांत्रिकों के बीच दुश्मनी थी। इसके बाद ब्रजभूषण ने सांबु को भेज दिया, साधू के यहाँ जाकर बताया कि सांबु न केवल इलाज करने के लिए तैयार हो गया है, बल्कि उसका अनुमान है कि यह शरभ की करतूत है।

साधू ने कहा—"तुम भी शरभ पर शंका करते हो? लेकिन मैंने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा है, यह करतूत सांबु की है। आज रात को वह अंजन लगाने के बहाने से तुम्हारे पुत्र के प्राण लेने का प्रयत्न करेगा। तुम मेरी बात मानकर अपने पुत्र की रक्षा कर लो।"

इसके बाद साधू ने ब्रजभूषण को बताया कि इसके वास्ते उसे क्या क्या

साधू ने सारी बातें सुनीं, तब बोला—"तुम्हारे पुत्र के अन्दर किसी भूत प्रेत ने प्रवेश नहीं किया है। किसी दुश्मन ने इस पर मंत्र फुंकवा दिया है। कोई मांत्रिक ही यह काम कर सकता है। बताओ, तुम्हारे गाँव में कितने मांत्रिक हैं?"

"हमारे गाँव में दो ही मांत्रिक हैं—शरभ और सांबु!" ब्रजभूषण ने कहा।

"उनमें से किसी ने यह काम किया होगा। तुम उन दोनों के पास जाकर पूछो कि अपने पुत्र का इलाज करे। जो मांत्रिक इसका इलाज करने को तैयार होगा, तुम लौटकर उसका नाम मुझे बतला दो।" साधू ने कहा।

करना होगा। उस दिन रात को व्रजभूषण तथा मधवाचार्य दो और आदमियों को साथ ले सांबु के घर की ओर चल पड़े और समीप में आड़ में छिपकर बैठ गये।

आधी रात के बीत जाने पर सांबु ने अपने घर के मध्य भाग में रंगोली सजाई, रंगोली के बीच मरे हुये सांप को लपेटकर रखा। उस पर एक कपाल रख दिया, कपाल पर एक नींबू को खड़ा किया। इसके बाद धूप इस तरह लगाया जिससे सारे घर में उसका धुआं फैल जाय। तब अपनी एक उंगली काटकर उसके रक्त से कपाल पर तिलक सजाये, इस क्रिया के समाप्त होने पर सांबु रंगोली के सामने बैठने ही वाला था, तभी चारों लोग सांबु के घर में घुस पड़े। उसको खंभे से बांधकर खूब पीटा, तब उसे घसीटकर साधू के पास ले आये।

सबने सांबु पर जोर डाला कि वह अपनी गलती को स्वीकार कर ले, पर सांबु ने रोते-पीटते हुए कहा—"महानुभाव, मैं भगवान की क़सम खाकर कहता हुँ कि मैंने कोई मंत्र नहीं फूंका है। मैं यह भी नहीं जानता कि किस दुष्ट ने यह अनर्थ किया है। इसी का पता लगाने के लिए मैं अंजन लगाकर देखनेवाला था, तभी ये लोग मुझे पीटकर घसीट लाये हैं।"

व्रजभूषण के नौकर सांबु को और पीटने जा रहे थे, तभी विरूप को साथ लेकर शरभ वहाँ पहुँचा और गरजकर

बोला–"तुम लोग सांबु को पीटना बंद कर दो। वास्तव में मंत्र फूँकनेवाले साधू के वेश में स्थित पडोसी गाँव के इस मांत्रिक को पीटो। इसने दुष्टता की, उलटे मुझे तथा सांबु को बदनाम करना चाहा। मैं पहले से ही इस पर शक कर रहा था।"

ये बातें सुनने पर साधू चुपके से खिसकने को हुआ। लेकिन शरभ और विरूप ने उसे पकड़कर उसकी ख़ूब मरम्मत कर दी।

वह चीखते हुए बोला–"भाइयों, मैंने लालच में पड़कर यह करतूत की है। मगर मुझसे यह दुष्ट कार्य करानेवाला बदमाश यहीं पर है।" इन शब्दों के साथ उसने माधवाचार्य की ओर संकेत किया।

माधवाचार्य का कलेजा कांप उठा और उसका चेहरा स्याह पड़ गया।

व्रजभूषण ने उस पर थूककर कहा–"तो यह करतूत तुम्हारी है? तुम ने यह काम क्यों कराया?"

इसका उत्तर विरूप ने यों दिया–"माधवाचार्य की कंजूसी से सभी लोग भली भांति परिचित हैं। इसने अपनी इकलौती बेटी का ब्याह मेरे साथ करना चाहा। शादी के पीछे खर्च होगा ही। इसलिए एक पैसा भी खर्च किये बिना मुझे अपना दामाद बनाने के लिए इसने साधू के द्वारा यह प्रयोग कराया है। मैं पागल कहा जाऊँगा तो कोई भी अपनी कन्या देने आगे न आएगा। इसलिए एक पैसा खर्च किये बिना मेरे साथ अपनी लड़की का ब्याह रचकर फिर मुझे साधारण मानव बनाने के लोभ में पड़कर इसने यह करतूत की है। पेड़ पर एक भयंकर आकृति को देखकर मेरा मतिभ्रमण हो गया था। शरभ की कृपा से मैं फिर से साधारण मानव बन गया हूँ।"

माधवाचार्य अपनी करनी पर लज्जित हो उठा, सबके सामने उसका सिर झुक गया। इस अपमान के कारण माधवाचार्य की अक्ल ठिकाने लग गई। इसके बाद उसने काफ़ी धन खर्च करके अपनी पुत्री का विवाह विरूप के साथ ही कर दिया।

महोदर की बातें सुन कुंभकर्ण राक्षसों के साथ रावण के महल में गया। इसके पूर्व ही राक्षसों ने रावण के पास पहुँचकर निवेदन किया–"कुंभकर्ण निद्रा से जाग उठे हैं। क्या आप उन्हें वहीं से युद्ध भूमि में भेजना चाहेंगे या आप के दर्शनों के लिए लिवा लाये?"

"मुझे कुंभकर्ण को देखना है। सादर उसको यहाँ पर लिवा लाओ।" रावण ने सुझाया। राक्षसों के द्वारा अपने भाई रावण का संदेशा पाकर कुंभकर्ण रावण के यहाँ आ पहुँचा।

लंका नगर की चहार दीवारी के बाहर स्थित वानरों ने कुंभकर्ण को देखा और डर के मारे वे इधर-उधर भाग खड़े हुए। रामचन्द्र ने भी कुंभकर्ण को देखा, साथ ही वानर सेना को भागते हुए देखा। इस पर उन्होंने विभीषण से पूछा–"एक विशाल मेघ जैसा लगनेवाला वह व्यक्ति कौन है?"

विभीषण ने रामचन्द्रजी से यों कहा:

"वह व्यक्ति विश्रवसु का पुत्र कुंभकर्ण है। उसने युद्ध में यमराज तथा इंद्र को भी पराजित किया है। इसकी जैसी भारी देह राक्षसों में किसी की नहीं है। अन्य राक्षस वर प्राप्त कर बलवान बन गये हैं, पर यह तो जन्मतः पराक्रमी है। जन्म-धारण के साथ ही इसने क्षुधा के मारे हजारों प्राणियों का भक्षण किया है। इसे देख जनता डर गई और इन्द्र की शरण में

गई । इन्द्र ने क्रोध में आकर कुंभकर्ण पर अपने वज्रायुध का प्रहार किया । इस पर कुंभकर्ण हुंकार कर उठा । उस ध्वनि को सुन जनता और भयभीत हो उठी । इसके बाद कुंभकर्ण ने इंद्र का वाहन ऐरावत नामक हाथी का एक दाँत उखाड़ा और इंद्र के वक्ष पर दाँत का प्रहार किया । इन्द्र भी घबरा गया । जनता को साथ लेकर ब्रह्मा की सेवा में पहुँचा और उनकी शरण माँगी । ब्रह्मा ने समस्त राक्षसों को बुला भेजा । उनमें कुंभकर्ण को देख ब्रह्मा को भी डर लगा । ब्रह्मा ने कुंभकर्ण से कहा–"अरे मूर्ख ! सारे लोकों का विनाश करने के लिए विश्रवसु ने तुम्हारा जन्म दिया है । तुम सदा-सर्वदा अपनी देह को भूलकर सोते ही रहो ।" ब्रह्मा के शाप के लगते ही कुंभकर्ण उनके सामने ही गिर पड़ा । इसे देख रावण ने ब्रह्मा से निवेदन किया– "महानुभाव ! आप के द्वारा अपने ही प्रपौत्र कुंभकर्ण को ऐसा शाप देना उचित नहीं है । लेकिन आप के वचन मिथ्या भी नहीं हो सकते । कुंभकर्ण सो गया तो कोई बात नहीं, लेकिन उसके सोने और जागते रहने का समय निर्द्धारण कीजिए ।" इस पर ब्रह्मा ने यह नियम रखा कि कुंभकर्ण छै मास सोता रहेगा और एक दिन जागता रहेगा । निद्रा से जागते ही भूख के मारे सामने जो भी दिखाई देगा, उसे खा लेगा ।

"महानुभाव ! आप के पराक्रम को देख भयभीत हो रावण ने कुंभकर्ण को निद्रा से जगा दिया है । अत्यंत भयंकर एवं पराक्रमी कुंभकर्ण वानरों को खाने के लिए आ पहुँचेगा । उसे देखते ही भागनेवाले ये वानर उसका सामना कैसे कर सकते हैं ? हमें उन्हें समझाना होगा कि वह संचार करनेवाला यंत्र है, तभी उनका डर जाता रहेगा ।" विभीषण की बातें सुन रामचन्द्रजी संतुष्ट हुए । तब नील को आदेश दिया कि लंका के सारे द्वारों पर हमला कर दें । इस पर गवाक्ष, शरभ, हनुमान, अंगद

पर्वत शिखरों को उठाकर युद्ध करने निकल पड़े ।

इस बीच कुंभकर्ण नींद की खुमारी में ही रावण के पास पहुँचा, रावण को चिंतित देखा। कुंभकर्ण को देख रावण अत्यंत आनंदित हुआ। अपने आसन से उठकर कुंभकर्ण के साथ आलिंगन किया। दोनों के बैठने के पश्चात कुंभकर्ण ने रावण से पूछा–"भैया, ऐसी जल्दी क्या आ पड़ी थी जिससे मुझे जगाया? समझ लीजिए कि जिसने आप को भयभीत किया है, उसकी मौत निकट आ गई है।"

इसके उत्तर में रावण ने कहा–"रामचन्द्रजी के द्वारा मुझ पर विपदा आ पड़ी है। सुग्रीव तथा वानर सेना के साथ रामचन्द्र समुद्र को पार कर आया है और हमारा सर्वनाश कर रहा है। लंका में जहाँ भी देखो, वानर फैले हुए हैं। इस युद्ध में वानर वीरों में से एक भी नहीं मरा' मगर उनके हाथों में अनेक राक्षस अपने प्राण गँवा बैठे हैं। इसलिए तुम वानरों का वध करके लंका की रक्षा करो।"

रावण के मुँह से ये बातें सुन कुंभकर्ण हँस पड़ा और बोला–"इसके पूर्व हमने जो सभा बुलाई, उसमें जो कुछ सोचा, वही हुआ है। सीता का अपहरण करके आप ने जो पाप किया, उसका फल तत्काल प्रकट हुआ। इस संबंध में हमारे छोटे भाई विभीषण ने जो सलाह दी, वही अनुकरणीय है। यदि आप को उसका सुझाव पसंद नहीं तो जैसा उचित समझें, कीजिए!"

इस पर क्रोध में आकर रावण ने कहा–"कुंभकर्ण! याद रखो! तुम मुझसे छोटे होकर भी मुझे उपदेश दे रहे हो! यह तो उपदेश देने का वक़्त नहीं है, पराक्रम दिखाने का समय है।"

"राक्षसराज! मैं आप का छोटा भाई हूँ। आत्मबंधु हूँ। अत: आप के हित की बातें कहना मेरा कर्तव्य है। यदि आप को दुख हुआ है तो आप निश्चिंत रहिए! मैं आप के सारे शत्रुओं का वध कर

डालूँगा। राम और लक्ष्मण का वध करके सारे वानरों को भगा दूंगा। अपने निकटतम व्यक्तियों को खोकर दुखी होनेवाले सारे राक्षसों को प्रसन्न करूँगा। मेरे जीवित रहते रामचन्द्र आप का वध नहीं कर सकता।"

कुंभकर्ण की बातें सुन महोदर ने उसे डांटते हुए कहा—"रावण जिस वक़्त सीताजी का अपहरण करने जानेवाले थे, तब हम सबने उनका समर्थन किया। अब तुम अपने पराक्रम का बखान करते हुए अकेले युद्ध करने जाना चाहते हो? यह भी समुचित नहीं लगता। हमारी ही जन्मभूमि में अनेक राक्षसों का वध अकेले रामचन्द्र ने किया है, ऐसे व्यक्ति को तुम अकेले कैसे मार सकते हो? रामचन्द्र के हाथों में पराजित राक्षस वीर अब भी राम का नाम सुनकर भयभीत हो रहे हैं। जाकर देख तो लो।"

इसके उपरांत महोदर ने रावण से कहा—"आप हममें से कुछ लोगों को युद्ध भूमि में भेज दीजिए। यदि हमने राम का वध किया तो बहुत ही उत्तम होगा। अन्यथा युद्धभूमि से लौटकर हम यह अफवाह फैलायेंगे कि हमने रामचन्द्र को निगल डाला है। आप प्रकट रूप से उत्सव मनाइए। सीताजी के द्वारा अपने पति से वंचित हो जाने के उपलक्ष्य में उन्हें सांत्वना दीजिए। उनको मीठी बातों के द्वारा अपनी बना लीजिए। बिना युद्ध के ही आप की इच्छा की पूर्ति होगी।"

महोदर की बातें सुनने पर कुंभकर्ण का क्रोध खौल उठा। उसने कहा—"तुम आइंदा कभी ऐसी झूठ-मूठ की बातें मत करो। तुम जैसे कायर व मूर्खों की सलाहें सुनने के कारण ही रावण की यह हालत हो गई है। तुम लोग युद्ध के नाम से ही डरते हो! राजा की बातों में हाँ में हाँ मिलाते हो! तुम लोगों की वजह से लगभग लंका का सर्वनाश हो गया है।

खजाना खाली हो चुका है। सारी सेना नष्ट हो गई है। लगता है, तुम लोग राजा को अपने शत्रु जैसे मानते हो। तुम लोगों ने जो भूलें कीं, उनको सुधारने के लिए मैं युद्धभूमि में जा रहा हूँ।"

कुंभकर्ण की बातें सुन रावण खिल-खिलाकर हंस पड़ा और बोला—"महोदर रामचन्द्र के नाम से ही डरता है, इसीलिए वह युद्ध करने के पक्ष में नहीं है। तुम जैसे आत्मबंधु और बलवान व्यक्ति मेरे लिए और हैं ही कौन? तुम शीघ्र युद्ध-क्षेत्र में चले जाओ। वानरों का भक्षण करो, युद्ध में विजयी होकर लौट आओ। वास्तव में तुम्हें देखते ही वानर भाग जायेंगे। राम और लक्ष्मण के कलेजे फट जायेंगे।"

इसके बाद कुंभकर्ण युद्ध में जाने के लिए सन्नद्ध हुआ। तेज शूल को हाथ में लिया, उस पर चमकनेवाले सोने के अलंकार किये गये थे। उस पर लाल पुष्पों की मालाएँ लपेटी हुई थीं। उसने रावण से कहा—"मैं अकेले ही युद्धभूमि में जाऊँगा। मेरी सेना को यहीं पर रहने दीजिए। मुझे देख भय खानेवाले सारे वानरों को खा डालूंगा।"

"तुम आयुधों से सन्नद्ध सैनिकों को साथ लेकर चलो। वानर अत्यंत पराक्रमी हैं। शीघ्रगामी हैं। दृढ़ लगनवाले हैं। अकेले तथा गफलत में रहनेवाले का वध कर बैठेंगे।" रावण ने समझाया।

इसके बाद रावण ने स्वयं अपने हाथों से कुंभकर्ण का अलंकार किया। कुंभकर्ण ने कवच धारण कर रावण के साथ आलिंगन किया। तब रावण के आशीर्वाद पाकर युद्धभूमि की ओर चल पड़ा। उसके साथ अनेक सैनिक रथों पर सवार हो, सेना के साथ शंख एवं भेरियां बजाते चल पड़े।

रास्ते में कुंभकर्ण ने राक्षसों से कहा—"वानरों ने हमारा कोई अहित नहीं किया है, अलावा इसके वानर हमारे वनों के

लिए शोभादायक होते हैं। वानरों के द्वारा लंका पर आक्रमण करने का वास्तविक कारण राम और लक्ष्मण हैं। इसलिए में युद्ध में केवल उन दोनों का ही वध करूंगा।"

ये बातें सुन राक्षसों ने हर्षनाद किये।

युद्धभूमि में कुंभकर्ण को देख वानरसेना तितर-बितर हो गई। इसे देख कुंभकर्ण अत्यंत प्रसन्न हो उठा।

अंगद ने वानरों को भयभीत देख नल, नील, गवाक्ष तथा कुमुदों से कहा–"तुम लोग अपने पराक्रम, स्वरूप तथा वंशों की बात भूलकर साधारण बंदरों की भांति डरकर भागते कहाँ जा रहे हो? लौट आओ। क्या तुम लोग प्राणों के भय से भाग रहे हो? सामने जो भयंकर आकृति दिखाई दे रही है, वह योद्धा नहीं, हमें डराने के लिए तैयार किया गया यंत्र है। हम लोग इसे नष्ट कर डालेंगे।"

ये बातें सुनने पर वानर साहस बटोरकर वृक्ष तथा शिलाएँ लेकर युद्धभूमि में आ पहुँचे। वे लोग मत्त हाथियों की भांति कुंभकर्ण पर टूट पड़े। मगर उनके वृक्ष तथा शिलाएँ कुंभकर्ण को हिला न सकीं। वह निर्दयतापूर्वक वानरों का वध करने लगा।

इस बार वानर कुंभकर्ण के हाथों में मार खाकर तेजी के साथ भाग खड़े हुए।

कुछ लोग समुद्र में कूद पड़े। कुछ लोग हवा में उड़ चले। कुछ लोग सेतु पर से भागने लगे। अंगद ने वानरों को भागने से रुकने की चेतावनी दी। उसने कहा–"इतने सारे वानरों का अकेले कुंभकर्ण को देख डरना कैसा? मगर वानरों ने सोचा, जान बची तो लाखों पाये, विचार से भागते गये। फिर भी अंगद ने उन्हें हित वचन सुनाकर लौटा लिया। हनुमान भी उसकी मदद के लिए आ पहुँचा।

इसके बाद हनुमान के नेतृत्व में ऋषभ, शरभ, मैंद, धूम्र, नील, कुमुद, सुषेण, गवाक्ष, रंभ, तार, द्विविद तथा पनस भी युद्ध करने निकल पड़े। वे लोग इस बार

मर मिटने के लिए तैयार होकर चल पड़े थे।

इस बीच कुंभकर्ण वानरों का भक्षण करने लगा। द्विविद एक पर्वत को उखाड़कर कुंभकर्ण पर हमला कर बैठा। उसने जो पर्वत फेंका, निशाना चूकने के कारण कुंभकर्ण के सैनिकों पर जा गिरा जिससे अनेक रथ, घोड़े तथा अनेक राक्षस चूर-चूर हो गये। इस बीच द्विविद ने एक और पर्वत शिखर को फेंका। उसने भी राक्षसों की अपार क्षति की। राक्षस रथिकों ने वानरों को मार डाला। वानरों ने वृक्षों के साथ राक्षसों का वध किया।

हनुमान ने आसमान पर से कुंभकर्ण पर अनेक प्रकार की शिलाओं तथा वृक्षों को फेंका। कुंभकर्ण ने अपने शूल के द्वारा पर्वतों को फोड़ डाला और वृक्षों को हटाकर दूर फेंक दिया। इसके बाद वह शूल को हाथ में लेकर वानर सेना का पीछा करते आगे बढ़ा, तब हनुमान ने एक पर्वत को उखाड़कर कुंभकर्ण पर प्रहार किया।

पहाड़ के प्रहार से कुंभकर्ण का शरीर छिल गया और उसकी देह से खून बहने लगा। इस पर कुपित हो कुंभकर्ण ने अपने शूल को चक्र की भांति घुमाकर हनुमान की छाती पर वार किया। हनुमान भीषण रूप से चीख उठा, खून उगलते बेहोश हो गया।

इस बीच नील ने कुंभकर्ण पर एक और पर्वत शिखर फेंका। कुंभकर्ण ने उसे अपने मुक्के से मारकर चूर चूर कर दिया। तब ऋषभ, शरभ, नील, गवाक्ष तथा गंधमादन इन पाँचों वीरों ने एक साथ कुंभकर्ण पर आक्रमण किया, उसे घेरकर पत्थरों, पेड़ों, मुक्कों तथा पैरों से मारा। ये प्रहार उसे अत्यंत सुखदायक प्रतीत हुए। तब जाकर उसका क्रोध उबल पड़ा। उसने उन पाँचों वीरों का एक-एक करके सामना किया। सब खून उगलते बेहोश हो गये।

बाजी प्रभु

छत्रपति वीर शिवाजी दिल्ली के मुग़ल बादशाह तथा मुग़ल साम्राज्य के दूसरे सूबों के शासकों की बगल में छुरी बन बैठे थे।

बात १६६० की है। शिवाजी पन्हाला दुर्ग में रहा करते थे। शिवाजी के साथ उस दुर्ग पर अधिकार करने के लिए बिजापुर के सुलतान ने सलाबत ख़ाँ को थोड़ी फ़ौज के साथ भेजा। कई दिन तक फ़ौज दुर्ग को घेरे हुए थी।

एक दिन शिवाजी के अनुचर सफ़ेद झंडे लिये हुए दुर्ग के बाहर आये और सलाबत ख़ाँ से पूछा—"आप किन शर्तों पर दुर्ग पर से घेरा उठायेंगे?"

उधर शिवाजी के अनुचर सलाबत खाँ से मंत्रणा कर रहे थे, तभी शिवाजी बूढ़े का वेष धारण कर अपने कुछ साहसी अनुचरों के साथ दुर्ग के पिछवाड़े के द्वार से भाग गये। थोड़ी दूर पर उनके वास्ते घोड़े तैयार थे।

जब शिवाजी तथा उनके अनुचर अपने वेश बदलकर घोड़ों पर सवार हुए, तब दुश्मन के एक गुप्तचर ने उन्हें देख लिया। फिर क्या था, सलाबत खाँ ने अपनी फ़ौज के साथ उनका पीछा किया।

जल्दबाजी में शिवाजी तथा उनके अनुचरों के लिए जो घोड़े चुने गये थे, वे उतने अच्छे क़िस्म के न थे। इसलिए सलाबत खाँ और उसके कुछ सिपाही जल्द ही शिवाजी के निकट पहुँचे। वहाँ पर भयंकर युद्ध हुआ, लेकिन शिवाजी ने बड़ी आसानी से दुश्मन को हराया।

शिवाजी के अनुचरों में बाजी प्रभु एक थे, जो अत्यंत विश्वासपात्र, वीर तथा शिवाजी के मित्र भी थे। उन्होंने गुप्त रूप से शिवाजी से कहा–"सारी फौज के आ मिलने पर सलाबत खाँ फिर से हम पर भयंकर हमला कर बैठेगा, इसलिए हमें जल्दी पहाड़ों में पहुँचना होगा।"

सलाबत खाँ जब भारी फौज लेकर उन पर हमला करने निकला, तब तक वे मोड़खिद नामक एक संकरीली घाटी में पहुँच गये थे। बाजी प्रभु ने शिवाजी को मनवाया कि वे उस घाटी को पार कर विशाल गढ़ नामक दुर्ग में पहुँच जायें! शिवाजी ने उन्हें बताया कि कुशलपूर्वक दुर्ग में पहुँचने की निशानी के रूप में वे तीन बार तोप दगवा देंगे।

बाजी प्रभु तथा उनके अनुचरों ने दुश्मन की फौज को परेशान किया। संकरीली घाटी में दुश्मन के प्रवेश करने से रोका और कुछ सिपाहियों को भीतर प्रवेश करने देकर उन पर पत्थरों की वर्षा की।

दुश्मन को तंग करने के बावजूद भी घाटी में वे घुस आये। तब बाजी प्रभु हिम्मत के साथ उनके बीच कूद पड़े और उनकी आँखों में धूल झोंककर घाटी में चंपत हो गये।

इस प्रकार अपने नेता शिवाजी को विशाल गढ़ में प्रवेश करने का मौक़ा देने के लिए बाजी प्रभु ने दुश्मन को रोका। आख़िर विशाल गढ़ से तोपों के दगने की आवाज सुनाई दी।
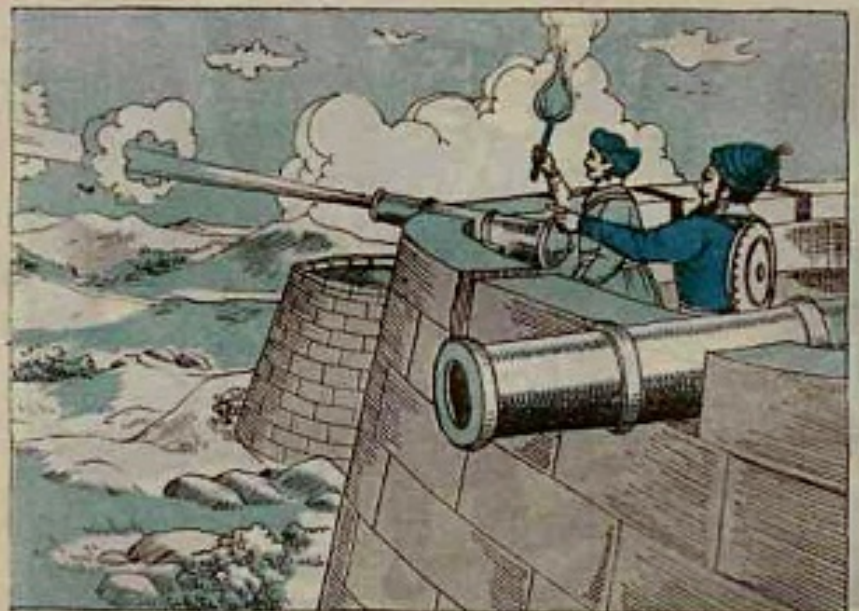
तब दुश्मन हताश हो वापस लौट गया। उस लड़ाई में बाजी प्रभु बुरी तरह से घायल हुए। मगर उन्होंने अपने घावों की कोई परवाह नहीं की। उसका लक्ष्य सफ़ल हुआ, तब हँसते-हँसते उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। मगर उन्होंने शिवाजी की रक्षा की थी, इसलिए वे इतिहास के पन्नों में वीर योद्धा तथा एक अनुपम देशभक्त के रूप में अमर हैं।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक गरीब किसान के दो बेटियाँ थीं। दोनों की शादियाँ हो चुकी थीं। भाग्यवश छोटी का पति संपन्न बना। उसने व्यापार करके काफ़ी धन कमाया, घर बना कर ठाठ से अपने दिन बिताने लगा। बड़ी बेटी गरीबी का सामना करने लगी।

एक बार किसान अपनी बड़ी बेटी को देखने गया। बड़ी बेटी ने अपने पिता को चावल, चटनी और मछली खिलाई। रात को एक चटाई पर किसान आराम से लेट गया। दूसरे दिन अपने घर लौट कर पत्नी से बताया–"हमारी बड़ी बेटी आराम से अपने दिन बिता रही है।"

इसके थोड़े दिन बाद किसान अपनी छोटी बेटी को देखने पहुँचा। बहुत बड़ा महल, कुर्सियाँ, सोफासेट, दर्वाजे पर लटकनेवाले पर्दे यह सब देखकर वह चौंक गया। भोजन के समय तरह-तरह के व्यंजन परोसे गये, जिनका स्वाद तक वह जानता न था। उसने जो कुछ खाया, वह पेट में भारी बोझ-सा लगा। रात को सोने के लिए उसे ऐसी चारपाई दिखाई गई, जिस पर मसहरी लगी थी। किसान ने सोचा कि शायद मसहरी के ऊपर चढ़ कर सोना होगा। वह बड़े ही प्रयास के साथ ऊपर पहुँचा, मगर मसहरी कट गई और वह चारपाई पर गिर पड़ा।

दूसरे दिन सवेरे वह अपने गाँव जाने को तैयार हो गया, उसकी बेटी ने दो-चार दिन और ठहर जाने को कहा, लेकिन वह घर लौट आया। अपनी पत्नी से बोला–"हमारी छोटी बेटी की जिंदगी कैसी यातनापूर्ण है, तुम क्या जानो? ऐसी जिंदगी हमारे दुश्मन की भी न हो!"

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें–"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा, २ & ३, आर्काट रोड़, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें दिसंबर १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों, इसके परिणाम चन्दामामा के फ़रवरी '७७ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां फ़रवरी १९७७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

C. V. Srinivasa Rao

★

B. M. Chopra

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ दिसंबर १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

दिसंबर के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : सुनो सरगम के प्यारे बोल!

द्वितीय फोटो : मुंह नहीं रे, आँखें खोल!!

भेजनेवाले : **पी. मिश्र,** द्वारा एफ़. एक्का, ए. आई. ई. प्रा. लि. रांची।

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras 600 026 : Controlling Editor : NAGI REDDI

लूटो जेम्स का मज़ा
जीतने के लिए ५०० मज़ेदार पुरस्कार!
इसके अलावा भी अन्य शानदार पुरस्कार
जीतने का सुअवसर!
क्या बता सकते हो कि इनमें कौन सा चित्र असमान है?
A
B
C
D
E
F
Cadbury's
MILK CHOCOLATE
GEMS
जल्दी करो!
अपना उत्तर, कॅडबरिज जेम्स के एक खाली प्लास्टिक पैकेट के साथ भेजो। पहले ५०० सफल प्रतियोगियों को ११ रुपये मूल्य का स्टेट बैंक गिफ्ट चेक मिलेगा। अतः तुम्हे अपने गिफ्ट चेक पर ४०० रुपये का एक और शानदार इनाम जीतने का मौका मिलेगा— भाग्यशाली लोगों के लिए अतिरिक्त लाभ!
अपना उत्तर, नाम और पते के साथ केवल अंग्रेजी में और बड़े (ब्लॉक) अक्षरों में लिखो। प्रवेश-पत्र इस पते पर भेजो:
"लूटो जेम्स का मज़ा" डिपार्टमेंट 20-F
पोस्ट बॉक्स नं. ५६, थाने ४००६०१
प्रवेश-पत्र पहुंचने की अंतिम तिथि:
15-1-1977
चॉकलेट से भरे रंगीन कॅडबरिज जेम्स
CHAITRA-C-39 HN
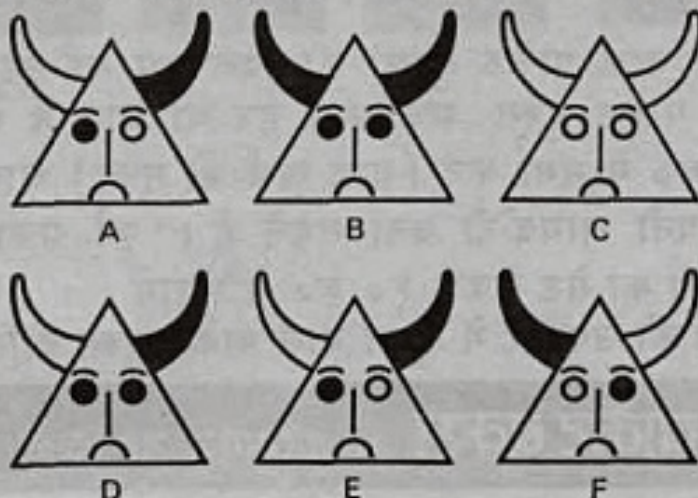
Result of the Chandamama-Camel Colour Contest No. 5. (Hindi)

1st Prize: Anima Mishra, Basti. *2nd Prize:* Devender Tyagi, Delhi. *3rd Prize:* Anil Kumar, Lucknow. Consolation Prizes: Anju Kukreja, New Delhi. Arun Kant Barabanki. Anjna Dhingra, New Delhi. Shreesh R. Dubey, Bhubaneswar. Ageet Richard Sextus, Kanpur. Merit Certificate: Seema Singh. C/o L. M. Singh, Meerut. Sanyogita Narang, New Delhi. D. Ramakant Rao, Nagpur. Kum. Vaishali Jadhau, Indore. Veena Rani, New Delhi. Jaspal Singh Dhunna, Sri Ganga Nagar. Rainu Duggal, Delhi, Vinod Goil, Bombay. Mahesh Kumar Kulthia, New Delhi. Sangita Chowdhry, Sultanpur.

CHANDAMAMA (Hindi) DECEMBER 1976 Regd. No. M. 54

मित्र-संप्राप्ति